अंक १५२

अक्तूबर - दिसंबर २०२०

कथाबिंब

कथाप्रधान त्रैमासिक पत्रिका

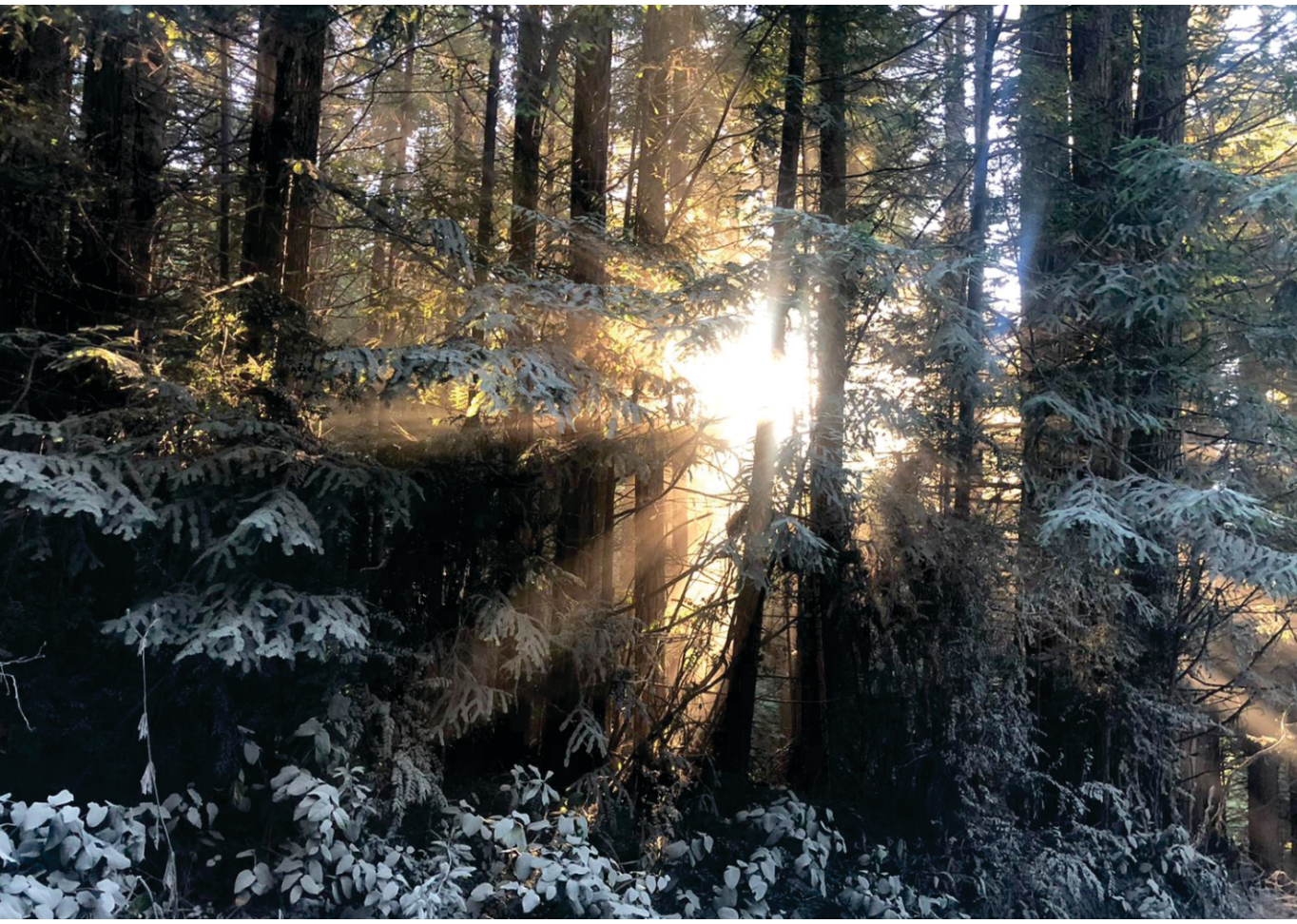

कहानियां

- सुधा थपलियाल
- सत्या शर्मा 'कीर्ति'
- मार्टिन जॉन
- डॉ. पूरन सिंह
- भंगला रामचंद्रन
- डॉ. गरिमा संजय दुबे

आमने-सामने

तारांचद भकसाने

२० रुपये

बाबू कैलाशनाथ स्मृति विज्ञान पुरस्कार

पिछले ६० वर्षों से कुछ अधिक समय से मुंबई मेरी कर्मस्थली है. चाहें विज्ञान में या साहित्य में मुझे जो कुछ भी उपलब्धि मिल सकी वह महाराष्ट्र की उर्वरक मिट्टी की देन है. साथ ही मैं उस मिट्टी को नहीं भूल पाया जहां मेरा जन्म हुआ, जहां की धूल, गलियों में मेरा शैशव बीता. हाई स्कूल तक की मेरी शिक्षा उत्तर प्रदेश के एक क़स्बे फ़तेहगढ़ में हुई. मन में विचार आया कि अपने विद्यालय के लिए कुछ करूं, विशेषकर विज्ञान के विद्यार्थियों के लिए. यह विचार २०११ में फलीभूत हो सका. तबसे पिताश्री की स्मृति में प्रतिवर्ष २६ जनवरी को **"बाबू कैलाशनाथ स्मृति विज्ञान पुरस्कार"** फ़तेहगढ़ निवासी मेरे भतीजे श्री राम मोहन वर्मा के करकमलों द्वारा दिया जाता है. ५००० रु. की पुरस्कार राशि के साथ छात्र को एक प्रशस्ति-पत्र भी प्रदान किया जाता है.

–डॉ. माधव सक्सेना, प्रधान संपादक, "कथाबिंब"

	विज्ञान के प्राप्तांक (प्र. श.)
१. श्री हेमंत मिश्रा (२००९-२०१०)	९२
२. श्री अमित अग्निहोत्री (२०१०-२०११)	९०
३. श्री हिमांशु राजपूत (२०११-२०१२)	९४
४. श्री अभिषेक वर्मा (२०१२-२०१३)	९५
५. श्री अंबर हस्तिनापुरी (२०१३-२०१४)	८५
६. श्री शिवम श्याम सुंदर (२०१४-२०१५)	९३
७. श्री अनुराग तिवारी (२०१५-२०१६)	९१
८. श्री शैलेंद्र कुमार (२०१६-२०१७)	९४
९. श्री शशांक कटियार (२०१७-२०१८)	८९
१०. श्री रौनक मिश्रा (२०१८-२०१९)	८१
११. श्री प्रतीक कुमार (२०१९-२०२०)	८८

राजकीय इंटर कॉलेज़, फ़तेहगढ़, उ. प्र.

२६ जनवरी २०२१

छात्र प्रतीक कुमार को पुरस्कार व प्रशस्ति-पत्र प्रदान करते हुए श्री राम मोहन के साथ प्रधानाचार्य श्री अरुण प्रताप सिंह

कॉलेज़ का प्रांगण

अक्तूबर दिसंबर २०२०
(१९७९ से प्रकाशित)

कथाबिंब

प्रधान संपादक
डॉ. माधव सक्सेना "अरविंद"
संपादिका
मंजुश्री
संपादन सहयोग
डॉ. राजम पिल्लै
जय प्रकाश त्रिपाठी
अशोक वशिष्ठ
अश्विनी कुमार मिश्र

संपादन-संचालन पूर्णतः
अवैतनिक तथा अव्यवसायिक

●सदस्यता शुल्क●
आजीवन : ७५० रु., **त्रैवार्षिक** : २०० रु.,
वार्षिक : ७५ रु.,
कृपया सदस्यता शुल्क
मनीऑर्डर, चैक द्वारा
केवल **"कथाबिंब"** के नाम ही भेजें.

●रचनाएं व शुल्क भेजने का पता●
ए-१० बसेरा, ऑफ दिन-क्वारी रोड,
देवनार, मुंबई-४०० ०८८.
मो.: ९८१९१६२६४८, ९८१९१६२९४९

e-mail : kathabimb@gmail.com
www.kathabimb.com

● **न्यूयॉर्क संपर्क** ●
नरेश मित्तल
(M) 845-367-1044
● **कैलीफ़ोर्निया संपर्क** ●
तूलिका सक्सेना
(M) 224-875-0738
नमित सक्सेना
(M) 347-514-4222

एक प्रति का मूल्य : २० रु.
कृपया नमूने की प्रति मंगाने हेतु
२० रु. के डाक टिकट अवश्य भेजें.
(सामान्य अंक : ४४-४८ पृष्ठ)

कहानियां

।। ७ ।। फ़ौजियों की पत्नियां हैं हम ! – सुधा थपियाल
।। ११।। निपटारा – मार्टिन जॉन
।। १७।। जिजीविषा मात्र शब्द नहीं – मंगला रामचंद्रन
।। २३।। और नदी बहती रही – सत्या कीर्ति
।। २७।। पिंजड़ा – डॉ. पूरन सिंह
।। ३१।। मुझे वापस लौटना है – डॉ. गरिमा संजय दुबे

लघुकथाएं

।। २६।। मस्तिष्क से विकलांग / डॉ. मृदुल शर्मा
।। २६।। बिंदी / डॉ. अनुराधा "ओस"
।। ३७।। चोर / लोकेंद्र सिंह कोट

ग़ज़लें / कविताएं

।। २२।। राजकुमार जैन राजन की कविताएं
।। ३८।। ग़ज़लें / राजेंद्र निशेश
।। ३८।। रक्त की प्यास (कविता) / देवेंद्र कुमार मिश्रा

स्तंभ

।। २ ।। "कुछ कही, कुछ अनकही"
।। ४ ।। लेटर बॉक्स
।। ३९।। "आमने-सामने" / ताराचंद मकसाने
।। ४३।। "औरतनामा" : डॉ. रखमाबाई राउत / डॉ. राजम पिल्लै
।। ४५।। पुस्तक-समीक्षा

●"कथाबिंब" अब फ़ेसबुक पर भी ●
facebook.com/kathabimb
आवरण पर नामित रचनाकारों से निवेदन है कि
वे कृपया अपने नाम को "टैग" करें.

आवरण : लो अब उग्रा सूरज (क्लामथ,अमेरिका), अगस्त २०२०.
फ़ोटो : तूलिका सक्सेना

"कथाबिंब" मुंबई की "संस्कृति संरक्षण संस्था" के सौजन्य से प्रकाशित होती है.

कुछ कही, कुछ अनकही

यह वर्ष २०२० का अंतिम अंक है. लगता है कि धीरे–धीरे स्थितियां सामान्य हो रही हैं. विश्व के किसी भी देश की अपेक्षा हमारे देश में कोरोना से मरने वालों की दर नगण्य हो गयी है. जबकि बहुत से पश्चिमी देशों में दूसरी लहर की ख़बरें सुनाई दे रही हैं. कोरोना के नये परिवर्धित रूप ने भी दस्तक दी है. टीकाकरण से उम्मीद की जा रही है कि शीघ्र हमारा देश कोरोना पर पूरी तरह विजय पा लेगा. इस सबके बावजूद थोड़ा विलंब से ही सही १५२ वां अंक पाठक "कथाबिंब" वेबसाइट पर जनवरी के अंत पढ़ सकेंगे. आशा है कि प्रिंट वर्ज़न भी पाठकों को जल्दी उपलब्ध होगा. हमें ख़ेद है कि कतिपय अपरिहार्य कारणों से इस अंक में सागर–सीपी स्तंभ नहीं जा सका है. पाठकों से निवेदन है कि यदि स्वयं या अपने संपर्क द्वारा "कथाबिंब" के लिए विज्ञापन दिला पाना संभव हो तो कृपया हमें बतायें. विज्ञापन दरें इस प्रकार हैं : पिछला आवरण पृष्ठ – रु. २०,०००, दूसरा अथवा तीसरा आवरण पृष्ठ – रु. १५,०००, पूरा पृष्ठ (श्वेत–श्याम) – रु. ५,०००. हम आपके सहयोग के लिए अत्यंत आभारी होंगे.

"कमलेश्वर–स्मृति कथाबिंब कथा पुरस्कार" के लिए अभिमत भेजने हेतु "मत–पत्र" पृष्ठ ५२ पर छपा है. वर्ष २०२० के सभी अंकों में, पिछले वर्ष की तरह इस वर्ष भी २४ कहानियां प्रकाशित हुई हैं. पाठकों से निवेदन है कि मत–पत्र के माध्यम से, पोस्ट कार्ड अथवा मेल द्वारा, अपने अभिमत का क्रम हमें भेजें. पाठकों से यह भी अनुरोध है कि कृपया अधिक से अधिक संख्या में इस आयोजन में भाग लें. "कथाबिंब" ही एक मात्र पत्रिका है जो पाठकों के सहयोग से लोकतांत्रिक तरीक़े से कहानी लेखकों को प्रति वर्ष पुरस्कृत करती है. वर्ष के सभी अंक आप "कथाबिंब" की वेबसाइट पर भी पढ़ सकते हैं. वेबसाइट के अलावा "कथाबिंब" को फ़ेसबुक पर भी देखा जा सकता है.

●

आइए इस अंक की कहानियों पर एक दृष्टिपात करें. अंक की पहली कहानी *"फ़ौजियों की पत्नियां हैं हम"* की लेखिका सुधा थपियाल ने अपनी कहानी के माध्यम से एकदम अनछुए कथ्य को प्रस्तुत किया है. देश की सीमाओं की सुरक्षा में चौबीसों घंटे सैनिक तैनात रहते हैं. उन पर और उनके परिवार पर क्या गुज़रती है यह हमें मालूम नहीं पड़ता. हम यदि अपने घरों में आराम से सो पा रहे हैं तो इन्हीं फ़ौजियों के कारण. अगली कहानी के लेखक मार्टिन जॉन का नाम जाना–पहचाना है. वे साहित्य के साथ चित्रकला में भी दखल रखते हैं. *"निपटारा"* कहानी एक सामान्य परिवार की कहानी है जिसमें छोटे–बड़े मसले का निपटारा मां करती है जो घर के हर सदस्य के मनमाफ़िक होता है. लेकिन अस्वस्थ मां की ज़िम्मेदारी लेने के लिए सभी बगले झांकने लगते हैं, इसका निपटारा भी अंततः मां ही करती है. तीसरी कहानी *"जिजीविषा मात्र शब्द नहीं"* ख्यातिप्राप्त लेखिका सुश्री मंगला रामचंद्रन की है. आजकल शिक्षा के हर स्तर पर गलाकाट प्रतियोगिता है. ८०–८५ प्रतिशत अंक आने के बावजूद छात्र को अच्छे संस्थान में प्रवेश नहीं मिल पाता. पढ़ाई के अत्यधिक दबाव के कारण कभी–कभी कुछ विद्यार्थी आत्महत्या कर लेते हैं. सुधीर केकरे के प्रिय मित्र महेंद्र ने दसवीं में असफल होने पर ट्रेन के नीचे आकर आत्महत्या कर ली थी. इस हादसे से व्यथित हो उन्होंने प्रण किया कि इस समस्या के समाधान की दिशा में वे अवश्य कुछ करेंगे.

अगली कहानी की लेखिका सत्या कीर्ति अपनी कहानी *"और नदी बहती रही"* के माध्यम से संक्षेप में, जीवन का एक शाश्वत सत्य प्रस्तुत करती हैं. दरअसल यह कहानी कम बल्कि एक कविता अधिक है. अपनी पीठ से चुन्नी सरका कर बहुत मासूमियत से सोनी दीपेश से कहती है कि मेरी पीठ पर फागुन के गीत लिख दो. दीपेश मन ही मन कहता है कि मुझे तो लिखना–पढ़ना नहीं आता मैं कैसे लिखूं. फिर दोनों के मध्य एक स्वप्न पंख फड़फड़ाने लगता है. सोनी अमरूद के पेड़ पर चढ़कर एक फल दीपेश को देती है. क्या यह कोई अमृत फल है? अंक की पांचवी कहानी *"पिंजड़ा"* के जाने–माने लेखक डॉ. पूरन सिंह हैं. यह ग्रामीण परिवेश की कहानी है. माया अभी बारहवीं में थी, आगे और पढ़ना चाहती थी. पिता ने अपनी बराबरी का घर देखा और उसकी शादी महेश से कर दी. शादी से दोनों ख़ुश थे. माया की सहेली शारदा जो उससे अधिक सुंदर थी की शादी भी आस–पड़ोस के धरमवीर से हुई. दोनों घरों में रोज़ का आना–जाना था. महेश की नज़र शुरू से शारदा पर रहने लगी. एक दिन अकेली पाकर महेश ने शारदा के साथ ज़बरदस्ती की. यह बात शारदा ने सबको बता दी. उसके बाद गांव में पंचायत बैठी. पंचों ने गांव की परंपरा अनुसार फ़ैसला दिया कि महेश ने जो कुछ शारदा के साथ किया, धरमवीर भी वैसा ही माया के साथ कर सकता है. दोनों महिलाओं ने अलग पंचायत बुलाकर इसका घोर विरोध किया.

अंतिम कहानी *"मुझे वापस लौटना है"* (डॉ. गरिमा संजय दुबे) की पृष्ठभूमि भी बलात्कार है. एक बार पिता और बेटा रामलीला में काम कर रहे थे, पिता हनुमान बने थे और भाई छोटा बंदर. बहन मुन्नी भी रामलीला देखने आयी थी, उसे लघुशंका लगी, वह पास बने बाथरूम में गयी कि कुछ गुंडों ने पकड़ लिया. चिल्लाने की आवाज़ सुनकर बाबा दौड़कर आये और बहुत मारपीट हुई. भाई ने वहीं पड़ा बड़ा पत्थर एक गुंडे को मारा. वह आदमी मर गया. पिता ने लड़के से कहा कि वह भाग जाये और अपराध अपने सिर पे ले लिया. उन्हें दस साल की सज़ा हुई. कोरोना के कारण उन्हें थोड़े दिन के लिए घर जाने की इज़ाजत मिली. दस सालों में बच्चे बड़े हो गये. वापस जाने का समय पास आ गया पर अब सज़ा जल्दी पूरी हो जायेगी. वे लौटकर फिर आयेंगे.

●

पिछले दिनों देश-विदेश में काफ़ी उथल-पुथल हुई. अमेरिका की चुनाव प्रक्रिया बहुत ही जटिल है. वैसे वहां दो ही पार्टियां हैं रिपब्लिकन और डेमोक्रेट्स. काफ़ी पहले से अलग-अलग राज्यों में वोट पड़ने लगते हैं, पोस्टल वोटों की संख्या भी काफ़ी होती है. वोटों को मैनुअली गिना जाता है. जो बाइडेन की जीत और ट्रंप की हार पक्की हो गयी थी. २० जनवरी को नये राष्ट्रपति बाइडेन ने उपराष्ट्रति कमला हैरिस के साथ शपथ ली. किंतु एक सप्ताह पहले तक ट्रंप राष्ट्रपति भवन को खाली करने को तैयार नहीं थे. ट्रंप के समर्थकों ने हथियारों सहित हमला कर दिया. गोलीबारी में एक आदमी की मृत्यु हो गयी और कुछ लोग घायल भी हुए. ऐसा अमेरिका के इतिहास में पहली बार हुआ. कुछ दिन पहले एक अश्वेत व्यक्ति को जरा सी बात पर पुलिस ने खुलेआम गोली मार दी थी. अमेरिका में ही नहीं कुछ दूसरे देशों में भी "ब्लैक लाइव्स मैटर" को ले कर आंदोलन हुए. थोड़े दिन पहले अपने यहां बिहार में चुनाव हुए. सात चरणों में मत पड़े. लेकिन किसी तरह का दंगा-फसाद नहीं हुआ. बहुत पहले की बात नहीं है, बिहार में मतपेटियां छीन कर वोट पड़ता था, ऐसे ही वोट "छाप" दिया जाता था. लेकिन जबसे ईवीएम मशीनों का प्रयोग होने लगा है, इस तरह की धांधली समाप्त हो गयी है. शुरू में ईवीएम मशीनों के उपयोग को लेकर कुछ दलों ने शंकाएं उठाने की कोशिश की लेकिन वे निर्मूल साबित हुईं. ईवीएम मशीनों का सबसे बड़ा फ़ायदा है कि मतगणना में समय नहीं लगता और एक ही दिन में परिणाम ज्ञात हो जाता है. अगले कुछ महीनों में बंगाल में चुनाव होने हैं. अभी तारीख़ों की घोषणा नहीं हुई है लेकिन काफ़ी पहले से गहमागहमी है. आये दिन कभी तृणमूल कॉन्ग्रेस की, कभी भाजपा की रैली. रोज़ मारपीट. यह दुखद है कि कुछ लोगों की हत्याएं भी हुई हैं. बंगाल का चुनाव हमेशा से रक्तरंजित रहा है. इस बार भाजपा जोरशोर से अपनी ताकत आजमा रही है. रोज़ ही तृणमूल कॉन्ग्रेस के अनेक कद्दावर नेता अपनी पार्टी छोड़ कर भाजपा में शामिल हो रहे हैं. ममता बनर्जी भी जी-जान से प्रचार में लगी हैं. बंगाल के बाद ही तमिलनाडु में भी चुनाव होने हैं. यहां भी जोड़-तोड़ शुरू हो गयी है. यह विडंबना है कि जब देखो देश के एक न एक प्रांत में चुनाव-प्रक्रिया जारी रहती है. प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री और अनेक मंत्री रैलियों और प्रचार कार्य में जुट जाते हैं. धन और समय का नुक़सान होता है. विकास के कार्य भी रुक जाते हैं. यह परम आवश्यक है कि आम चुनावों के साथ ही विधान सभा के चुनाव भी संपन्न हों. सब दलों की सहमति से संसद में बिल लाना चाहिए कि एक बार प्रांतों के कार्यकाल को कम-ज़्यादा करके एक-सा किया जाना संभव हो.

पिछले लगभग दो महीनों से दिल्ली की सीमाओं पर संसद के दोनों सदनों से पारित तीन कृषि बिलों के विरोध में जगह-जगह किसान धरने पर बैठे हैं. इनमें से अधिक पंजाब और हरियाणा के सिख हैं. वे अड़े हैं कि तीनों क़ानूनों को पूरी तरह निरस्त किया जाये, जबकि सरकार का कहना है कि ये क़ानून किसानों के हित में हैं. कृषि मंत्री तोमर जी ने किसान संगठनों के नेताओं को दिल्ली बुलाकर ११ बार मीटिंग की, बहुत-से पहलुओं पर सहमति बनी. यहां तक सरकार ने यह भी कहा कि डेढ़ साल तक इन्हें लागू नहीं किया जायेगा. बात यहां ख़त्म हो जानी चाहिए थी और आंदोलन वापस लेना चाहिए था. लेकिन ज़िद में २६ जनवरी को दिल्ली में ट्रैक्टर रैली निकाली गयी, जिसने बहुत ही उग्र रूप ले लिया. बिना इज़ाजत लाल किले के पास ट्रैक्टरों का जुलूस पहुंचा और आतताइयों ने लाल किले के बुर्ज से राष्ट्र-ध्वज हटाकर अपना झंडा लगा दिया. पूरा दृश्य बाबरी मस्जिद के विध्वंस की याद दिला रहा था. एक अनुमान के अनुसार एक दिन की ट्रेक्टर रैली में ४० लाख लिटर डीज़ल लगा, कुल ख़र्चा आया ३३.६ करोड़. ६० दिनों में ग़रीब अन्नदाताओं ने कितना ख़र्चा किया होगा? यह पैसा कहां से आया ? कुछ देसी व विदेशी शक्तियां हैं जो मोदी सरकार को हटाना चाहती हैं, इसके लिए साम-दाम-दंड किसी का भी प्रयोग क्यों न करना पड़े. विपक्ष की दिक्कत यह है कि धीरे-धीरे उसकी स्पेस कम होती जा रही है. अपने कार्यकाल में कॉन्ग्रेस ने इन्हीं क़ानूनों की पुरजोर वकालत की थी, लेकिन आज विरोध करना उसकी विवशता है.

धारा ३७० ख़त्म होने के एक वर्ष में, कश्मीर में बरसों बाद आज शांति है. कहीं से भी पत्थरबाजी की ख़बर नहीं है. नक्सली घटनाओं में भी काफ़ी कमी आयी है. कोरोना के नियंत्रण के लिए मोदी सरकार ने जो-जो क़दम उठाये उससे एक साल से कम समय में स्थितियां सामान्य होती जा रही हैं. देश के नागरिकों ने भी पूरी तरह सहयोग किया. आज लॉकडॉउन लगभग समाप्तप्राय है. इसी दौरान देश ने दो-दो वैक्सीन विकसित की हैं और बड़े पैमाने पर टीकाकरण शुरू हो चुका है. पर्याप्त मात्रा में वैक्सीन का उत्पादन हो रहा है. देश के अलावा भारत के पड़ोसी देशों को भी वैक्सीन मुहैया करायी जा रही है. ब्राजील जैसे दूरदराज देश को भी वैक्सीन भेजी गयी तो वहां के प्रमुख ने कहा कि लगा कि हनुमान संजीवनी लेकर आये हैं.

मानव का यह स्वभाव है कि यदि एक रास्ता बंद हो जाये तो वह नये रास्ते खोज लेता है. लॉकडॉउन में जब स्कूल कॉलेज़ बंद हो गये तो ऑनलाइन क्लासेज़ चलाये जाने लगे. बच्चों के पास स्मार्ट फ़ोन होना ज़रूरी हो गया. कई कंपनियों ने बच्चों के लिए अतिरिक्त पढ़ाई के लिए ऑनलाइन पैकेज़ शुरू किये. अवसर का लाभ उठा कर कमाई का अभूतपूर्व तरीका! यह बात दीगर है कि लगातार बहुत समय तक फ़ोन या टैबलेट की स्क्रीन देखने से बच्चों की आंखों पर चश्मा चढ़ेगा. पढ़ाई के अलावा बिना सभागृहों के वेब-सेमिनारों का आयोजन करना आसान होगया. हर्र लगे न फिटकरी रंग चोखा आये!

●

चलते-चलते, इस वर्ष कोरोना के कारण आई पी एल के सभी मैच बिना दर्शकों के दुबई और पास के देशों में खेले गये. लेकिन हाल ही में भारत की क्रिकेट टीम आस्ट्रेलिया गयी. यहां दर्शकों की कोई पाबंदी नहीं थी. टेस्ट सीरीज़ के चौथे मैच में आस्ट्रेलिया को हरा कर भारत ने एक नया इतिहास बनाया !!

अरविंद

लेटर-बॉक्स

आज जब चारों ओर कोरोना की दहशत फैली हुई है और दिल्ली को किसानों ने घेर रखा है तब अचानक 'कथाबिंब' के दो अंक पाकर आश्चर्य हुआ. कथाबिंब से कभी सीधा घनिष्ठ संबंध नहीं रहा. 'कथाबिंब' कहानी की पत्रिका है और मैं कहानी प्रेमी तो हूं पर कहानी लेखक नहीं.

जो भी पत्रिका, पुस्तक या पत्र मुझे मिलता है मैं उसे ध्यान से पढ़ता हूं और यथासंभव प्रतिक्रिया भी भेजता हूं. आपके द्वारा भेजे 'कथाबिंब' के दोनों अंक (जनवरी-जून'२०संयुक्तांक) और (जुलाई-सितंबर'२०) पढ़े. मुझे आपके संपादकियों ने प्रभावित किया. बहुत कम देखा गया है कि कोई संपादक पत्रिका की पूरी रचनाएं पढ़कर टिप्पणी दे. संपादक के पास इतना समय कहां, वह पाठक नहीं संपादक है पर आप प्रत्येक कहानी पढ़कर उस पर टिप्पणी भी करते हैं यह बड़ी ख़ूबी है. यही नहीं उन टिप्पणियों के साथ सामयिक समस्याओं की भी चर्चा करते हैं. मुझे यह सब अच्छा लगा.

जनवरी-जून'२० संयुक्तांक के संपादकीय के साथ 'औरतनामा','सागर-सीपी' स्तंभ के साक्षात्कार तथा अन्य लेख पढ़े. जानकारी की दृष्टि से दोनों उपयोगी हैं. 'आमने-सामने' भी अच्छा है रचनाकारों की ज़िंदगियों से परिचय हो जाता है. इस अंक की सभी कहानियां अभी नहीं पढ़ीं, जो भी पढ़ीं उनमें 'काठ की हांडी', 'टेलीफ़ोन','ख़बर की तलाश में','नैहर छूट गयो','जॉली बुआ','सांझी छत' सार्थक कहानियां लगीं जो आज की ज़िंदगी के किसी न किसी पक्ष को उजागर करती हैं.

जुलाई-सितंबर'२० अंक की सभी कहानियां पढ़ीं. संपादकीय में आपने सभी कहानियों का निचोड़ सामने रख दिया है. उसके बाद अधिक टीका-टिप्पणी की गुंजाइश नहीं रहती. 'सुमन-सुवास' बहुत अच्छी कहानी है. रीना और मानसी का मिलना संयोग ही है, वैसे सुमन मुश्किलों के बीच रास्ता निकालने वाली नारी है. 'हनी ट्रैप' आज की जालसाज दुनिया की कहानी है जो पाठकों को सावधान भी करती है. वैसे आजकल यह धंधा ख़ूब फैल रहा है. 'मां की वजह से ज़िंदा हूं' विदेश में रहने वाली लेखिका की कहानी है जिसमें विदेश और अपने देश की स्थितियों का दर्शन कराया गया है. रजत की मां की कहानी बड़ी कारुणिक है. 'सोनकली और अशोक वृक्ष' मुझे प्रभावित नहीं कर सकी. 'बोल मेरी मछली कितना पानी' आज की ओछी राजनीति और पानी की समस्या को लेकर रचित है किंतु कहानी साधारण है. 'एक नयी ज़िंदगी' कुष्ठ रोग की समस्या सामने रखती है. आज भी समाज में कितना अंधविश्वास है. कहानी का अंत सुखद और अप्रत्याशित है.

'आमने-सामने' और 'सागर-सीपी' स्तंभ सामान्य हैं. 'औरतनामा' में डॉ. आनंदीबाई से परिचय प्रेरक है. ऐसे कर्मठ समाजसेवी चरित्रों को अधिकाधिक प्रचारित करना चाहिए. 'चक्रव्यूह' लघुकथा में अच्छा प्रश्न उठाया है. यह विचारणीय है. 'जुलूस' और 'जगह' दोनों लघुकथाएं आज की सामाजिक स्थिति और मानसिकता का बोध कराती हैं. 'मज़हबी ख़ुराफात' भी शिक्षाप्रद है.

डॉ. गंगाप्रसाद बरसैंया
१०३,गोयल विहार, खजराना, गणेश मंदिर के पास
इंदौर, ४५२०१६. मो.९४२५३७६४१३

'कथाबिंब' का जुलाई-सितंबर'२० अंक. वैसे मैं हार्दिक आभारी हूं डॉ. अरविंद का जो मुझे नियमित 'कथाबिंब' भेजते हैं. मैं चाहे नवांशहर रहा, चाहे मोहाली या फिर अब हिसार — हर पते पर 'कथाबिंब' ढेर द्वार पहुंचा देते हैं. मेरी रचनाएं प्रकाशित करते हैं. सन १९७९ से मैं भी कहां से कहां पहुंच गया और 'कथाबिंब' भी. इतने लंबे समय तक पत्रिका निकालने पर बधाई. सैल्यूट!

इस अंक की कहानियां बहुत सशक्त और एक से एक बढ़कर. चाहे राजेंद्र राजन की 'हनी ट्रैप' हो या फिर निधि अग्रवाल की 'बोल मेरी मछली कितना पानी' और अर्चना पैन्यूली की 'मां की वजह से ज़िंदा हूं.' रवि शंकर की 'एक नयी ज़िंदगी'. सभी कहानियां पढ़कर लगा कि कितनी महत्त्वपूर्ण भूमिका 'कथाबिंब' निभा रही है.

मित्र धीरेंद्र अस्थाना को देहरादून से जानता हूं जब हम लोगों ने लिखना शुरू ही किया था. धीरेंद्र भी देहरादून से मुंबई तक का सफर तय कर चुका और अनेक पत्रिकाओं में संपादन कला दिखायी — बढ़िया सवाल-जवाब. बाक़ी लघुकथाएं भी और ग़ज़लें भी अच्छी हैं.

स्तरीय संपादन के लिए हार्दिक बधाई.

-कमलेश भारतीय,
पूर्व उपाध्यक्ष, हरियाणा ग्रंथ अकादमी, १०३४ बी, अर्बन एस्टेट-२, हिसार १२५००५ (हरि.).
मो. : ९४१६०४७०७५

⏩ 'कथाबिंब' का जुलाई-सितंबर' २० अंक प्राप्त हुआ. अंक ने उत्कृष्टता की परंपरा निभायी है. डॉ. निधि अग्रवाल की 'बोल मेरी मछली कितना पानी', राजेंद्र राजन की 'हनी ट्रैप' व डॉ. निरुपमा राय की 'सुमन सुवास' कहानियां इस अंक की उत्कृष्ट रचनाएं हैं. युगेश शर्मा की 'जुलूस' तथा प्रतिभा चौहान की 'जगह' लघुकथाएं प्रशंसनीय हैं. पत्रिका की सभी रचनाएं पठनीय हैं. संपादकीय 'कुछ कही, कुछ अनकही' विचारोत्तेजक एवं सारगर्भित है. सभी रचनाकारों को बधाई.

श्यामसुंदर सुमन,
पो. बॉ. ६०, द्वारा मधुर कोरियर, गोल प्याऊ चौराहा, भीलवाड़ा-३११००१. मो. ९४६०२०२२१७

⏩ 'कथाबिंब' का जुलाई-सितंबर'२० अंक हस्तगत हुआ. प्रत्येक अंक की तरह यह अंक भी महत्वपूर्ण है. सुखद यह है कि साहित्य के मानदंडों के अनुरूप निरंतर कलकल सरिता की भांति प्रवाहमान है. संपादकीय में देश, समाज, राजनीति के समसामयिक विषयों पर खींचा गया खाक़ा स्तुत्य है. सभी कहानियां संदेशप्रद व पठनीय हैं. कथाकारों को शुभकामनाएं.

लघुकथाएं, ग़ज़लें और कविताएं भी स्तरीय हैं. स्तंभों ने भी ख़ासा प्रभावित किया. आज के समय में जब संवेदना एवं विचारों का लोप हुआ जा रहा है तब साहित्य, कला एवं संस्कृति ही वह माध्यम है जो संवेदनशीलता का सोता फोड़ सकता है. 'कथाबिंब' उसी दिशा में है. प्रवासी भारतीयों का लेखन कितना जानदार रहता है यह उन्हें पढ़कर समझा जा सकता है. शिल्प और सौंदर्य की दृष्टि से रचनाएं कमजोर हों, किंतु मानवीय मूल्य, हिय का दर्द, मर्म को स्पर्श किये बिना न रहतीं. कोविद काल में आपका लगातार सक्रिय बने रहना, वैदेशिक भ्रमण और रचनादि चयन प्रक्रिया में व्यस्त रहना प्रशंसनीय है. आप अपने उद्देश्यों में क़ामयाब हों, सुंदर समाज के निर्माण में सहायक हों. 'कथाबिंब' की टीम को उज्ज्वल भविष्य की शुभकामनाएं.

- शिवनाथ शुक्ल
लिंक रोड, कैंप-२, भिलाई-४९०००१. (छ. ग.)
मो. : ७८०४९९१६९२

⏩ कथाप्रधान त्रैमासिक पत्रिका 'कथाबिंब' का ताज़ा जुलाई-सितंबर'२० अंक आज ही मिला. संपादक महोदय का आभारी हूं. आज ही, इसमें प्रकाशित कुल ६ कहानियों में से अभी २ कहानियां ही पढ़ी हैं.

मूल रूप से उत्तराखंड की राजधानी देहरादून की रहने वाली, १९९७ से डेनमार्क की निवासी सुश्री अर्चना पैन्यूली की कहानी 'मां की वजह से जिंदा हूं' सबसे पहले पढ़ी. यह कहानी यथार्थ के धरातल पर वर्तमान भारतीय परिवेश के संदर्भ में बुनी हुई चलचित्र की भांति प्रतीत होती है. यूरोप से कुछ समय के लिए भारत में पुनः आकर रहने पर क्या-क्या सुविधाएं और क्या असमानताएं देखने को मिलती हैं, उसको अर्चना जी ने अपनी पैनी दृष्टि से कहानी में बहुत बारीकी और सच्चाई से पिरोया है. और अंत तक कहानी में रोचकता बनाए रखी है, जो एक श्रेष्ठ कहानी की पहचान है.

दूसरी कहानी हमीरपुर (हिमाचल प्रदेश) के प्रतिष्ठित लेखक श्री राजेंद्र राजन की 'हनी ट्रैप' पढ़ी. हालांकि राजन जी को मैं बरसों से जानता हूं. मगर उनकी कहानी पढ़ने का सौभाग्य पहली बार हुआ. अपनी विशिष्ट शैली में रोचकता, कौतुहलता बनाते चलते राजन जी ने समाज में व्याप्त जालसाजी की नयी तकनीक को बहुत ही सहजता से दर्शाया है. अंत तक एहसास ही नहीं हो पाता की हम धीरे-धीरे किसी फ्रॉड के चंगुल में फंसते चले जा रहे हैं. राजन जी ने कहानी में मर्द की फितरत की बड़ी ईमानदारी से व्याख्या की है.' ये औरत जात भी अजब-ग़ज़ब है. ज़रा-सी मीठी जुबान क्या बोल दी, मर्द तो बस फिसलने लगता है. काई पर अचानक पैर आ जाने के समान....'

शराफ़त अली खान,
३४३, फा. एन्क्लेव, फ़ेज-२, पो.रुहेल खंड वि. वि, बरेली-२४३००६. मो. : ७९०६८४९०३४

प्राप्ति-स्वीकार

कथाकार रूपसिंह चंदेल (गद्य) : सं. माधव नागदा, नीलकंठ प्रकाशन, ४७६०-६१, २३, अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली-२. मू. ७९५ रु.

अंगूठे पर वसीयत (उपन्यास) : **शोभनाथ शुक्ल,** साक्षी प्रकाशन, साक्षी विला, १२७४/२८, बढ़ैयावीर, सिविल लाइंस-२, सुलतानपुर-२२८००१. मू. ३०० रु.

क्या तलाश है (उपन्यास) : **ललित रंजन,** जानकी प्रकाशन, अशोक राजपथ, चौहट्टा, पटना-८००००४. मू. ३९९ रु.

दिन थकता हुआ (उपन्यास) : **डॉ. सूर्यदीन यादव,** सरिता प्रकाशन,३, पुनीत कॉलोनी, पवन चक्की रोड, नाडियाड-३८७००२. मू. १०० रु.

राय साहब की चौथी बेटी (उपन्यास) : **प्रबोध कुमार गोविल,** आयुष बुक्स, गोपालपुरा बाईपास, जयपुर-३०२०१८. मू. ३०० रु.

तेरे शहर के मेरे लोग (उपन्यास) : **प्रबोध कुमार गोविल,** साहित्यागार, धामाणी की गली, चौड़ा रास्ता, जयपुर-३०२००३. मू. २५० रु.

कुछ तो कहो गांधारी (उपन्यास) : **डॉ. लोकेंद्र सिंह कोट,** कमलकार मंच, ३ विष्णु विहार, अर्जुन नगर, दुर्गापुरा, जयपुर-१८. मू. १५० रु.

शब्दों के परे (निबंध संग्रह) : **विपिन पवार,** परिदृश्य प्रकाशन, सोराबजी संतुक लेन, धोबी तालाब, मरीन लाइंस, मुंबई-४००००२. मू. २२५ रु.

मन कितना वीतरागी (निबंध सं.) : **पंकज त्रिवेदी,** प्रकाशक विश्वगाथा , सुरेंद्रनगर-३६३००२. (गुजरात). मू. २०० रु.

सृजन का समकालीन परिदृश्य (साक्षात्कार) : **अरुण तिवारी,** प्रेरणा पब्लिकेशन, देशबंधु भवन, २६ बी, प्रेस कॉम्प्लेक्स, एम. पी. नगर, जोन-१, भोपाल-४६२०११. मू. १९० रु.

प्रतिरूप तुम्हारा (कहानी संग्रह) : **डॉ. निरुपमा राय,** नमन प्रकाशन, ४२३१/१, अंसारी रोड, दरियागंज, नयी दिल्ली-२. मू. ३०० रु.

शत-प्रतिशत (क. सं.) : **डॉ. हंसा दीप,** किताबगंज प्रकाशन, राधाकृष्ण मार्केट, गंगापुर सिटी-३२२२०१. (राज.) मू. २५० रु.

खिड़कियों से झांकती आंखें (क. सं.) : **सुधा ओम ढींगरा,** शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लेक्स, बस स्टैंड, सीहोर-४६६००१. मू. १५० रु.

निशां चुनते-चुनते (क. सं.) : **विवेक मिश्र,** डायमंड पॉकेट बुक्स, ओखला इंड. एरिया, फेज-२, नयी दिल्ली-११००२०. मू. २०० रु.

यात्रीगण कृपया ध्यान दें (क. सं.) : **राम नगीना मौर्य,** रश्मि प्रकाशन, २०४, सनशाइन अपार्टमेंट, बी३, कृष्णा नगर, लखनऊ -२२६०२३. मू. १८० रु.

दसवीं के भोंगाबाबा (क. सं.) : **गोविंद सेन,** लोकोदय प्रकाशन, ६५/४४, शंकर पुरी, छितवापुर रोड, लखनऊ-२२६००१. मू. १५० रु.

धुस-कुटुस (क. सं.) : **प्रबोध कुमार गोविल,** आयुष बुक्स, गोपालपुरा बाईपास, जयपुर-३०२०१८. मू. ३०० रु.

छोटी सी बात (क. सं.) : **रामचरन हर्षाना,** प्रकाशक विश्वगाथा , सुरेंद्रनगर-३६३००२. मू. १५० रु.

जाग उठे मन के रिश्ते (क. सं.) : **युगेश शर्मा,** पहले पहल प्रकाशन प्रा. लि., भोपाल. मू. ३०० रु.

कांजी हॉउस एवं अन्य कहानियां (क. सं.) : **अरविंद कुमार,** वनिका पब्लिकेशन्स, विष्णु गार्डन, नयी दिल्ली-११००१८. मू. ३०० रु.

निरीह (क. सं.) : **डॉ. दिनेश पाठक "शशि"**, प्रकाशक जवाहर पुस्तकालय, सदर बाजार, मथुरा-२८१००१. मू. २५० रु.

मेरी प्रिय लघुकथाएं (ल. सं.) : **डॉ. अनिल शूर आज़ाद,** मोनिका प्रकाशन, ६००/५-ए, आदर्श मोहल्ला, मौजपुर, दिल्ली-५३. मू. ४०० रु.

अंतहीन रिश्ते (ल. सं.) : **राम मूरत "राही"**, अमरविन्यास, एफ-६/३, ऋषिनगर, उज्जैन-४५६०१०. मू. १८० रु.

सातवें पन्ने की खबर (ल. सं.) : **संतोष सुपेकर,** अमरविन्यास, एफ-६/३, ऋषिनगर, उज्जैन-४५६०१०. मू. ३०० रु.

भावना भट्ट (कविता सं.) : प्रकाशक विश्वगाथा , सुरेंद्रनगर-३६३००२. (गुजरात). मू. १५० रु.

पूछिये मत (नवगीत सं.) : **डॉ. मृदुल शर्मा,** एजु. बुक सर्विस, डी. के. रोड, मोहन गार्डन, उत्तम नगर, नयी दिल्ली-११००५९. मू. ३०० रु.

आग में झुलसता समय (क. सं.) : **सदाशिव कौतुक,** आधारशिला प्रकाशन, बड़ी मुखानी, हल्द्वानी, नैनीताल-२६३१३९. मू. २०० रु.

कागज़, क़लम, कविता (क. सं.) : **हरीलाल "मिलन"**, पंकज बुक्स, १०९-ए, पटपड़गंज, दिल्ली-११००९१. मू. २९५ रु.

ये शब्द गीत मेरे (क. सं.) : **सतीश गुप्ता,** वी. पी. पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, बसंत विहार, नौबस्ता, कानपुर-२०८०२१. मू. २०० रु.

वह समय था (क. सं.) : **भोलानाथ कुशवाहा**, अंजुमन प्रकाशन, ९४२ आर्य कन्या चौराहा, मुट्ठीगंज, प्रयागराज-२११००३. मू. १५० रु.

नीली धूप में (क. सं.) : राम किशोर कुशवाहा, शब्दांकुर प्रकाशन, मदनगीर, नयी दिल्ली-११००६२. मू. २५०

२००४ से लेखन में सक्रिय. राष्ट्रीय स्तर की अनेक पत्रिकाओं में कहानियां व समीक्षाएं प्रकाशित.

फ़ौजियों की पत्नियां हैं हम !

सुधा थपलियाल

लखनऊ
०८.०९.१९९४

आदरणीय मिसेज़ गुप्ता,
सादर प्रणाम!

मैं, कल सकुशल वापस बच्चों के साथ लखनऊ पहुंच गयी हूं, आपके साथ बिताये गये यादगार पलों के साथ. उस दिन यूनिट के रेज़िंग डे के 'सिल्वर जुबली' फ़ंक्शन का निमंत्रण पाकर मैं ख़ुशी से फूली न समायी थी. मुझे एक बार फिर से अपने दिवंगत पति के साथ बिताये हसीन पलों को याद करने और उन्हें क़रीब से महसूस करने का अवसर मिल रहा था. जब मैं अपने दो छोटे बच्चों के साथ फ़ैजाबाद के रेलवे स्टेशन पहुंची तो रात हो चुकी थी. मैं घबरा रही थी, अनजाना शहर था. मैं निर्धारित समय से कुछ घंटे पहले पहुंच गयी थी. इसलिए यूनिट वालों को ख़बर नहीं मिल पायी. जैसे ही मैंने अपने पहुंचने की सूचना यूनिट को दी तो तुरंत एक गाड़ी स्टेशन पर हमें पिक-अप करने आ गयी. मुझे बहुत आश्चर्य तब हुआ, जब मुझे पता चला कि वे हमें आपके घर लेकर जा रहे हैं. मैं थोड़ा संकोच से भी भर गयी. आपसे मेरी मुलाकात पहले कभी हुई नहीं थी. कर्नल गुप्ता से तो मुलाकात हो रखी थी. कर्नल गुप्ता मेरे पति से सीनियर अवश्य थे, लेकिन शादी पहले हमारी हो गयी थी. कर्नल गुप्ता उस समय अनमैरिड थे.

घर पहुंचने पर जिस अपनेपन और प्यार से आपने हमारा स्वागत किया, मेरा सारा संकोच छूमंतर हो गया. उस समय मैं अपने जीवन के एक ऐसे दौर से गुज़र रही थी, जब मुझे किसी हमदर्द की नितांत आवश्यकता थी. आपने जिस स्नेह से मुझे और मेरे बच्चों को खाना खिलाया, उसको ता-उम्र मैं कभी भूल नहीं पाऊंगी. आपके दोनों बच्चे तो एकदम से मेरे बच्चों के मित्र बन गये थे. उस रात वे सब सोये भी एक साथ थे. कर्नल गुप्ता से आपने आग्रह किया था, दूसरे कमरे में सोने के लिए. आप स्नेह से मेरे बगल में लेटकर आत्मीयता

और धीरज के साथ मेरी बातों को सुनती रहीं. आपकी आत्मीयता से द्रवित हो मैं पूरी रात अपने सारे गिले-शिकवे, दर्द और कष्टों को आपके सामने बोलती चली गयी. आप शिद्दत से मेरे दर्द को महसूस करने के साथ अपनी संवेदना जताती रहीं. कभी-कभी हम जीवन में बस एक सच्चा मित्र चाहते हैं, जो बस सुन सके हमारे जज्बातों और व्यथा को. इस बात को मैं शब्दों में व्यक्त नहीं कर पाऊंगी कि उस रात आपने वह मित्र बनकर मेरा कितना आत्मबल बढ़ाया, कितना मेरा अकेलापन दूर किया. जब मैं समारोह में शामिल होने के लिए घर से चली थी, तो सोचा ना था कि आपके रूप में कोई अपना मुझे मिल जायेगा.

कौन-सी बातें नहीं हैं, जो मैंने आपसे शेयर न की हों. पति के साथ बिताये इन आर्मी के मकानों में अपने दिन से लेकर उनके शहीद होने तक की. एक अलग ही वातावरण होता है कैंट का. यहां की हर ख़ुशबू मेरी सांसों में बसी है. जीवन जो हम जी रहे होते हैं वह अगले ही पल क्या करवट ले, कुछ कह नहीं सकते. वह मनहूस दिन आज भी याद है, जिसने मेरी पूरी दुनिया को पलट दिया. जब बॉर्डर से इनके शहीद होने की ख़बर आयी थी. उसके बाद उनके पार्थिव शरीर का तिरंगे में लिपटकर आना... मेज़र प्रदीप... अमर रहें... अमर रहें... हर तरफ़ उनके नाम की जय-जयकार हो रही थी. एक हुजूम-सा उमड़ा हुआ था. मैं कुछ नहीं महसूस कर पा रही थी. दिल और दिमाग़ जड़ हो चुका था. उस समय लगा कि दुनिया यहीं पर समाप्त हो गयी. ऐसा लग रहा था कि अचानक किसी ने मुझे एक वीरान मरूस्थल में खड़ा कर दिया, जहां पर दूर-दूर तक कोई दिखायी नहीं दे रहा था. मैं विधवा हो चुकी थी... एक शहीद की विधवा.

आख़िर कब तक जड़ बनी बैठी रहती. चुनौतियां मुंह उठाये खड़ी थीं. फिर शुरू हुआ संघर्षों का अंतहीन सफ़र. दो और पांच साल के दो छोटे बच्चे. कहीं कोई सहारा नहीं. ससुराल में सास-श्वसुर स्वयं पति पर आर्थिक रूप से निर्भर थे. मैं अपने माता-पिता की बुढ़ापे की इकलौती संतान. ये सब मेरा संबल नहीं थे, वरन् सहारे के लिए सभी की नज़रें मुझ पर टिकी थीं. बड़ी बहू होने का दबाव, बुज़ुर्ग माता-पिता की अकेली संतान होने के कारण, इन सबकी ज़िम्मेदारी भी अनायास ही मेरे कंधों पर आ गयी थी. परिस्थितियों ने बैठने भी नहीं दिया. उस समय आर्मी में पति के शहीद होने के बाद पत्नी को कोई नौकरी देने का प्रवाधान भी नहीं था. किसी तरह से लखनऊ के एक स्कूल में वार्डन की नौकरी मिल गयी. दोनों बच्चों को लेकर लखनऊ आ गयी. सोचा था कि अब सब ठीक होगा. बच्चों और मुझे एक सहारा मिल गया. लेकिन यहां भी चुनौतियां कम न थीं. एक जवान विधवा का जीवन आसान नहीं होता. लोगों की घूरती निग़ाहों का सामना करना सहज न था. मैंने तो पति का सुरक्षा कवच खोया ही था, मेरे बच्चों ने भी अपने पिता का साया इतनी छोटी उम्र में खो दिया था. जीवन से बहुत कुछ चला गया था.

कितनी सारी बातें मैं आपसे करती रही. यह आपका अपनत्व और सहृदयता थी कि मैं अपने मन के पन्ने खोलती चली गयी, और आप शिद्दत से उसको सुनती रहीं. आपकी मैं तहेदिल से आभारी रहूंगी, उस रात के लिए. भविष्य में आपसे मुलाकात होगी, इस आशा से मैं इस पत्र को समाप्त करती हूं. गुप्ता जी को मेरा आभार और नमस्कार कहिएगा और बच्चों को ढेर सारा प्यार.

-आपकी अनिता

प्रिय अनिता,

चिरंजीव !

आशा करती हूं, तुम और बच्चे सकुशल होगे. तुम और बच्चे कार्यक्रम में शामिल होने आये बहुत अच्छा लगा. 'सिल्वर ज़ुबली' कार्यक्रम को आयोजित करने की ज़िम्मेदारी कर्नल गुप्ता पर थी. जैसे ही रेलवे स्टेशन से तुम्हारे पहुंचने की सूचना मिली. इन्होंने कहा कि तुम अकेले बच्चों के साथ रात में पहुंची हो, इसलिए तुम्हें घर पर लाना ही ज़्यादा उचित होगा.

जीवन में अपने को कभी भी अकेला मत महसूस करना. यूनिट के लोग हमेशा तुम्हारे साथ हैं. मेज़र वर्मा का अचानक चले जाना बहुत दुखदायी है, हम सभी के लिए. उनकी शहादत को पूरा देश नमन करता है. उस रात तुम्हारी बातों को सुनकर बहुत तकलीफ़ हुई. बिना पति के तुम और बिना पिता के बच्चे कितना अकेलापन महसूस करते हैं, इसका दिल से अहसास हुआ. नौकरी पर भी जमाने की भेदती नज़रों का सामना करना तुम्हारे लिए कितना कष्टकारी होता होगा, मैं समझ सकती हूं. दो अबोध बच्चों के साथ बड़ों की ज़िम्मेदारी लेने के लिए, तुम अभी बहुत छोटी हो. लेकिन आर्मी में एक ख़ूबी है, कि यहां पर हमें एक और

परिवार मिल जाता है, जो पूरी ईमानदारी से देखभाल करता है. तुम अपना मनोबल कमज़ोर नहीं करना. मेजर वर्मा देश के लिए शहीद हुए हैं. पूरा देश उनको नमन करता है और सदैव उनके प्रति नतमस्तक और आभारी रहेगा.

अनिता, उस दिन जब तुमसे बातें हो रही थीं, तुम्हारे कई अनुभवों को सुन यह आभास हुआ, जैसे तुम मेरे अनुभव सुना रही हो. हम फ़ौजियों की पत्नियां हैं. आर्मी में हम सभी को कमोबेश ऐसे दौर से गुज़रना पड़ता हैं. हर दो-तीन साल में कभी पीस, तो कभी फ़ील्ड पोस्टिंग का होना. फ़ील्ड पोस्टिंग तो इतने दुर्गम और संवेदनशील इलाक़ों में होती है कि उसकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता. वहां पर न परिवार को साथ रख सकते और न ही अनुमति होती है, सुरक्षा के तहत. एक फ़ौजी की पत्नी का जीवन भी किसी चुनौती से कम नहीं होता. इधर परिवार की ज़िम्मेदारी, उधर पति की सुरक्षा का भय.

आज भी याद है मुझे... हम लोग दिल्ली में थे कि अचानक इनको जालंधर बुला लिया गया. उस समय इनकी यूनिट जालंधर में थी. मैं सात महीने की गर्भवती थी और बेटा राहुल दो साल का था. इन्फेंटरी में होने के कारण यूनिट को किसी भी आपातकालीन परिस्थितियों के लिए तत्पर रहना पड़ता है. अभी हम नयी जगह पर ठीक से व्यवस्थित भी नहीं हुए थे, कि अचानक से यूनिट को इंडियन पीस कीपिंग फ़ोर्स के अंतर्गत एडवांस पार्टी के रूप में श्रीलंका जाने का आदेश मिला. पूरी यूनिट सकते में आ गयी. घबराहट सबके चेहरों पर पसर गयी. उससे पहले एडवांस पार्टी के रूप में जो यूनिट श्रीलंका गयी थी, उसके १२ सदस्य शहीद हो गये थे. श्रीलंका में सिविल वार छिड़ी हुई थी. उस लड़ाई को समाप्त करने और शांति बहाल करने के लिए एक संधि के तहत भारत को अपनी सेना भेजनी थी. श्रीलंका का वातावरण बहुत ही अशांत और उग्र था. वहां जाने का मतलब था कि जीवन को दांव पर लगाना. दो साल का बेटा और सात महीने की गर्भवती पत्नी को अकेले छोड़ते हुए, ये घबरा रहे थे. उस समय परिवार का कोई भी सदस्य आस-पास नहीं था. फ़ोन भी ज़्यादातर घरों में नहीं होते थे. पत्रों के माध्यम से ही स्थितियों को अवगत कराया जाता था. देहरादून ससुराल और मायके पत्र भेज दिया गया और किसी को तुरंत जालंधर पहुंचने के लिए कहा गया. यूनिट के अन्य सदस्यों ने अपने परिवारों को घर भेजना आरंभ कर दिया था. मुझे डॉक्टर ने यात्रा करने से मना कर दिया था. यह शहर मेरे लिए अंजान था, और ये भी एक अंजान और दहशत से भरे माहौल वाले देश में जा रहे थे. मैं इनके सामने हिम्मती बनने की कोशिश कर रही थी. आख़िर वह दिन आ गया, जब इनकी यूनिट को श्रीलंका के लिए कूच करना था. अपनी यूनिफ़ॉर्म में तैयार हो, जब ये निकलने लगे, तो इनकी आंखें नम हो गयी थीं. बेटे राहुल को गोदी में उठाकर बस इतना ही बोल पाये 'मम्मी का ख़्याल रखना,' फिर बिना पीछे देखे तेज़ी से बाहर निकल गये.

मैं तुम्हें क्या बताऊं अनिता, वे दिन मैंने कैसे बिताये... आस-पास के ज़्यादातर फ़्लैट वीरान हो गये थे. एक अजीब-सा भय हर तरफ़ पसरा हुआ था. मैं मात्र २५ साल की, और साथ में दो साल का बच्चा. एक-एक दिन काटना मुश्किल हो रहा था. घर से अभी तक कोई नहीं पहुंचा था. लेकिन अनिता, जैसे मैंने तुमसे कहा कि आर्मी में हमें एक और परिवार मिल जाता है. रोज़ सुबह यूनिट के सीओ और उनकी पत्नी मेरा हाल-चाल पूछने आते थे. इनकी यूनिट को गये एक हफ़्ता हो चुका था. श्रीलंका से जो भी ख़बर आती थी, वह सीधे यूनिट के ऑफ़िस जाती थी. उसी के माध्यम से हमारे पास ख़बर आती थी. यूनिट की जो गाड़ी संदेश लेकर आती थी, उसका नंबर ३०३ आज भी मुझे याद है. मेरे बेडरूम की खिड़की से वह गाड़ी आती दिखती थी. जैसे ही उस गाड़ी की आवाज़ आती, मैं तेज़ी से बेडरूम जाती और धीरे से पर्दा हटाकर, गाड़ी से उतरने वाले जवानों के चेहरों को पढ़ने की कोशिश करती. उनके चेहरे बहुत कुछ बता देते थे. उस गाड़ी की याद आज भी मेरे दिल में सिहरन उत्पन्न कर देती है.

जैसे ही मेरी मां देहरादून से जालंधर पहुंचीं, मैं उनसे लिपट गयी. मेरी सारी घबराहट, बेचैनी, डर आंखों के रास्ते से बह निकले. फिर कभी-कभार इनके पत्र मिल जाते थे, जिसमें ये अपने विषय में कम हमारे प्रति ज़्यादा चिंतित दिखायी देते थे. उस दिन हम ख़ुशी से उछल गये, जब पता चला कि मेरी डिलीवरी डेट नज़दीक देख, यूनिट ने इनको दो महीने की छुट्टियां दे दीं. हम सब बेसब्री से इनका इंतज़ार करने लगे. जब ये पहुंचे, तो एक मिनट के लिए हम पहचान ही नहीं पाये. इनकी गोरी त्वचा काली-सी लग रही थी, शरीर भी कमज़ोर लग रहा था. राहुल तो इनको

देखते ही इनसे चिपक गया. जब भी हम श्रीलंका के विषय में कुछ पूछते, इनका एक ही उत्तर रहता...'सब ठीक है...' इसी बीच प्यारी-सी बेटी के आने से चारों और उल्लास-सा छा गया. एक महीने के बाद हम सभी देहरादून चले गये. देहरादून में जब भी सास जी चिंतित हो श्रीलंका के बारे में कुछ पूछतीं, इनका वही उत्तर होता... 'चिंता मत करो, सब ठीक है..' दूसरा महीना भी कैसे बीत गया, पता ही न चला. इनको वापस श्रीलंका जाना था. जिस दिन ये जा रहे थे, फिर से वही डर और घबराहट ने हम सबको घेर लिया. सभी बेहद चिंतित हो गये. सासजी अपने इकलौते बेटे की सलामती के लिए बार-बार ईश्वर से प्रार्थना कर रही थीं. श्वसुर जी जो कि स्वयं फ़ौज से रिटायर हुए थे, चिंतित स्वर में इनको हिदायत दे रहे थे. और, एक बार फिर ये श्रीलंका के लिए निकल पड़े.

डेढ़ साल तक कर्नल गुप्ता श्रीलंका रहे और हम सब एक दहशत से भरे रहे. पत्रों के माध्यम से ये किसी भी प्रकार की सूचना हमें नहीं दे सकते थे,गोपनीयता के तहत. जब ये सही-सलामत वापस आये, तो सभी की थमी हुई सांसें वापस आयीं.

उसके बाद इनकी यूनिट असम में तमुलपुर, भूटान बॉर्डर के पास नियुक्त हो गयी. यह एक फ़ील्ड पोस्टिंग थी. ज़्यादा संवेदनशील ना होने के कारण परिवार को साथ रखने की अनुमति थी. जिनके बच्चे बड़े थे, पढ़ाई कर रहे थे, उनके परिवार नहीं गये. मैं अपने दोनों बच्चों को लेकर, इनके साथ चली आयी. वहां सब परिवारों को केवल एक-एक कमरा मिला था. खाना सब मैस में होता था. बहुत जल्दी सब मैस के खाने से उकता गये. अपने किचन के लिए तरस गये. रात को सब खाना खाने के बाद बातें करने बैठ जाते. चूंकि यूनिट उसी समय श्रीलंका से आयी थी, तो ज़्यादातर इन सबकी बातों का विषय वहीं का होता था. सब श्रीलंका में बिताये अपने-अपने अनुभव सुनाते तो मेरे तो रोंगटे खड़े हो जाते. मन एक बार फिर दहशत से भर जाता. मैं हतप्रभ रह गयी, वहां की बातें सुनकर. कैसे ये लोग अपरिचित देश में, जहां की भौगोलिक स्थिति से भी परिचित नहीं थे, जहां चारों तरफ़ हर पल मौत मंडरा रही थी ये रह रहे थे. ताकतवर तमिल उग्रवादियों-लिट्टे गुरिल्लों से लड़ना भारतीय सेना के लिए आसान ना था. इसके लिए उन्हें स्थानीय लोगों की मदद की ज़रूरत पड़ती थी.

'सब ठीक है...' वाक्य कहने वाले गुप्ता जी ने जो बात उस दिन बतायी, सुनकर मैं भय से अवाक रह गयी, रूह कांप गयी, आंखें विस्मय से फैल गयीं. एक बार इनकी यूनिट श्रीलंका के भयावह जंगलों में पैट्रोलिंग के लिए निकली हुई थी. कुछ जवान आगे चल रहे थे. कर्नल गुप्ता बस दूसरा पांव उठाकर रखने ही वाले थे कि दूर खड़ा एक जवान चिल्ला पड़ा.. 'नहीं'... ये सहमते हुए पीछे हट गये. इससे पहले ये कुछ समझते, एक भयानक विस्फोट हुआ. इनको सचेत करने वाले जवान के देखते ही देखते परखच्चे उड़ गये. ये तो जड़ से होकर रह गये. ज़मीन में विस्फोटक माइन बिछायी हुई थी. ये तो बच गये, बस दूसरे क़दम की क्षण भर की दूरी से. लेकिन इनको आगाह करने वाले जवान के जाने का अफ़सोस आज भी जब-तब इनके मन में एक टीस-सी पैदा कर देता है.

अनिता, हम आर्मीवालों की ज़िंदगी ऐसी ही होती है. संवेदनशील स्थानों पर तैनाती अगले ही पल क्या दृश्य बदल दे, कुछ कह नहीं सकते. जीवन अमोल है, इसका कोई स्थान नहीं ले सकता है. बस एक जज्बा है, जो हमारी सेना को विपरीत परिस्थितियों में भी जोश से भर, जीने का हौसला देता, वह है, हमारा देश प्रेम. दुश्मन को सामने देखकर हमारी सेना का ख़ून खौल जाता है. देश की सुरक्षा के लिए हमारे वीर सेनानी अपनी जान की परवाह न कर, दुश्मनों पर टूट पड़ते हैं. अगर शहीद होंगे तो अपनी मातृभूमि के लिए... यह भाव हमारे मस्तक को गर्व से तान देता है. तुम्हारे पति शहीद मेज़र प्रदीप वर्मा, उन वीर सेनानियों में से एक हैं.

अनिता, अब मैं, पत्र समाप्त करती हूं. जब कभी भी तुम्हें मेरी आवश्यकता हो, निसंकोच कहना. कभी भी अपने को अकेले मत समझना, जीवन के हर मोड़ पर हम सब तुम्हारे साथ हैं. अपना ख़्याल रखना. बच्चों को मेरा प्यार और आशीर्वाद.

तुम्हारी अपनी,
स्मिता

५१/११ हरिद्वार रोड,
देहरादून. २४८००१.
ई-मेल : sudhathapliyal@rediffmail.com
फोन : ७२४८७२५२४५/७९०६३८९२५१

निपटारा

मार्टिन जॉन

जन्म –१९५४, झारखंड.

: सृजन विधाएं :
कहानी, कविता, लघुकथा. पेंटिंग, रेखाचित्र सृजन में विशेष रुचि

: प्रकाशन :
शताधिक रचनाएं, रेखाचित्र पत्र-पत्रिकाओं, वेब मैगज़ीनों, ब्लॉग, फ़ेसबुक समूहों में प्रकाशित. दर्ज़नों पुस्तकों और पत्रिकाओं के आवरण पृष्ठ का सृजन. आकाशवाणी से रचनाओं का प्रसारण.

: प्रकाशित कृतियां :
'सब ख़ैरियत है', 'फ़ेसबुक लाइव और ज़िंदगी का दी एंड' (लघुकथा संग्रह), 'ग्राउंड ज़ीरो से लाइव' कविता संग्रह प्रकाशनाधीन.

: पुरस्कार एवं सम्मान : 'सारिका' लघुकथा प्रतियोगिता, 'कथादेश' लघुकथा प्रतियोगिता, 'सोच विचार' ग्राम्य कथा प्रतियोगिता, 'प्रेरणा –अंशु' लघुकथा प्रतियोगिता, 'रचनाकार ऑर्ग'. लघुकथा प्रतियोगिता में पुरस्कृत / सम्मानित.

: संप्रति :
सेवानिवृत रेलकर्मी, स्वतंत्र लेखन

घर है तो समस्याएं होंगी ही. अगर अभी नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों!... समस्या की कोई निश्चित शक्ल नहीं होती. कोई न कोई रूप धारण कर आ धमकती है. ....अक्सर ऐसा होता है कि जब हम किसी एक समस्या से जूझ रहे होते हैं, उसका हल तलाश करने में सर खपा रहे होते हैं तो उस समय ऐसा लगता है जैसे इस जैसी समस्या किसी दूसरे के घर में कभी नहीं आयी होगी.

हमारे घर में भी अजीब-अजीब क़िस्म की समस्याएं जब तब मुंह बाये खड़ी हो जाती थीं. उस समय हम छोटे थे, खेलने-खाने के दिन थे. ज़ाहिर है, समस्याओं से जूझना और उन्हें सुलझाना हमारी ज़िम्मेदारी नहीं थी. घर में जब कोई समस्या आन खड़ी होती तो उसका सामना करने के लिए मां ही आगे रहतीं, चेहरे पर न घबड़ाहट, न कोई तनाव! कुछ ऐसी जुगत भिड़ातीं कि समस्या ही घबड़ाकर नौ दो ग्यारह हो जाती. दरअसल समस्याओं को सुलझाने में मां को महारत हासिल थी. ऐसे समय में पापा चुप्पी साधे रहते ...एकदम बेफ़िक्र. बस एक ही बात कहकर आश्वस्त हो जाते — 'तेरी मां है न!'

बचपन में जब कभी हम तीनों भाई किसी बात पर लड़ते-झगड़ते तो मां कुछ इस तरीक़े से हमारी लड़ाई सुलझाती कि हमें एक दूसरे से शिकायत नहीं रह जाती. एकदम संतोषप्रद और सर्वमान्य निपटारा!

खेलते–कूदते, पढ़ते–लिखते हम बड़े हुए. बारी-बारी कॉलेज़ की पढ़ाई पूरी करते गये और नौकरी की तलाश में जुटते गये, नौकरी पाने के मामले में हम तीनों भाई ख़ुशनसीब निकले. रेलवे सर्विस कमीशन की परीक्षाएं पास करते गये, अलग-अलग कैटेगरी की नौकरियां मिलती गयीं — जैसे वेलफ़ेयर इंस्पेक्टर, कमर्शियल इंस्पेक्टर, प्राइमरी टीचर.

जैसा कि अमूमन हर घर–परिवार की सोच रहती है — बेटा जवान हो गया, नौकरीशुदा हो गया तो अब शादीशुदा भी हो जाना चाहिए.

नौकरीशुदा बेटों के मां-बाप उनके रिश्ते के लिए ज़्यादा फ़िक्रमंद नहीं होते, ...बिरादरी के लोग रिश्तों का संधान देने लगे थे. तय था कि बड़े भाई की शादी पहले होनी चाहिए. सो, उन्हीं के लिए लडकी पसंद की गयी और महीने भर में ज़रूरी तैयारियों और इंतज़ामात के बाद उनका विवाह रचा दिया गया. बड़े भाई की शादी के बाद दो-दो साल के अंतराल में हम दोनों भाइयों की भी शादियां हो गयीं.

अब हमारे घर में तीन बहुएं, हम तीन भाई, हमारे बच्चे और मां–पापा थे. जब तक बच्चों का आगमन नहीं हुआ था, तीन छोटे-छोटे कमरों वाला घर हमें छोटा नहीं लगा. लेकिन ज्यों-ज्यों घर के बच्चे बड़े होते गये, हमें अपना घर छोटा लगने लगा. बहुएं हिम्मत जुटाकर, दबी ज़ुबान में कभी-कभी इस ओर इशारा कर देती थीं उनके इशारों को हम प्रकटतः तवज़्ज़ो नहीं देते थे लेकिन बढ़ते परिवार की दिक़्क़तों और ज़रूरतों को नज़र-अंदाज़ भी नहीं कर सकते थे. हालांकि इस छोटे घर में ही गुज़र-बसर करने की मज़बूरी नहीं थी और न मां-पापा की ओर से कोई दबाव था.

कई दिक़्क़तों के बीच एक बड़ी दिक़्क़त का सामना रोज़-रोज़ करना पड़ता था. हम तीनों भाई दूर-दराज़ के अलग-अलग स्टेशनों के कार्यस्थलों में पदास्थापित थे. प्रतिदिन साइकिल या स्कूटी से आठ-दस किलोमीटर की दूरी तय करनी पड़ती थी. मां की नज़रों से हमारी आये दिन की दिक़्क़तें छुप न सकीं. मां थी ही ऐसी. अपने बेटों के हाव-भाव, हरकतों का सही–सही मतलब निकाल लेने वाली मां, मसलों को जांचने–परखने और चुटकी में ही उसका हल ढूंढ़ लेने वाली मां.

'सुनो, तुम लोग रेलवे क्वार्टर के अलाटमेंट के लिए दरख़्वास्त डाल दो!'

'लेकिन मां!'

'देखो, बच्चे बड़े हो रहे हैं. आगे उन्हें आला दर्ज़े की तालीम की ज़रूरत है. यहां इसकी सुविधा नहीं है. जिस रेल एरिया में रहोगे वहां रेलवे स्कूल है, सेंट्रल स्कूल है, कॉन्वेंट स्कूल है.'

मामला कोई बड़ा नहीं था और न पेचीदा. कंफ़र्ट एकोमोडेशन की चाह और बेहतर सुविधा वाली ज़िंदगी के लिए राजी-ख़ुशी से घर छोड़ने वाला मामला था. लेकिन इस फ़ैसले को अमल में लाने वाला मामला बेहद संवेदनशील था. सिर्फ़ घर छोड़ने की बात नहीं थी, मां-पापा से दूर हो जाने वाला मामला भी था.

'देखो, हमारी फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं. हम आते-जाते रहेंगे तुम लोगों के पास. तुम लोग भी आते रहोगे.' मां हमारे अंदर उमड़-घुमड़ रहे भावों को फ़ौरन ताड़ गयी.

मसला हल हो चुका था. अब कोई दुविधा वाली स्थिति नहीं थी. मां ने राजी–ख़ुशी से अपनी सहमति देकर इस समस्या से हमें उबार लिया था. दूसरे ही दिन हमने अपने-अपने संबंधित विभागों में क्वार्टर आबंटन के लिए एप्लीकेशंस डाल दिये, महीने–दो महीने के अंदर बग़ैर किसी अड़चन के हमारे नाम क्वार्टर्स आबंटित हो गये, हम अपने-अपने माल-असबाब के साथ क्वार्टरों में शिफ़्ट भी कर गये.

छूट गया घर ...!

छूट गये मां–पापा. .....मन भारी था. घर से जुड़ीं यादें कभी–कभी विचलित कर देतीं, ...कभी लगता, हम लोगों ने कहीं ग़लत निर्णय तो नहीं ले लिया!.... एक अपराध-बोध मन-मिज़ाज को कचोटता रहता. लेकिन ज़िंदगी की रफ़्तार ने आहिस्ता-आहिस्ता सब कुछ सामान्य कर दिया. सप्ताह–दो सप्ताह के अंतराल में हम सपरिवार घर पहुंच जाते. मां-पापा भी आकर एक-दो दिन बिताकर वापस लौट जाते.

हां, घर छोड़ने के पहले, मां-पापा की उम्र को ध्यान में रखते हुए हम एक ज़रूरी काम कर आये थे. सालों से घर के काम-काज में मां का हाथ बंटाने वाली शांता मौसी अंधेरा होने के पहले अपने घर चली जाती थीं. हमने उसकी तनख़्वाह बढ़ाकर उसे स्थायी तौर पर रख लिया. अब वह ज़्यादातर समय हमारे घर पर ही बितातीं. उनका अपना घर ज़्यादा दूर नहीं था. समय निकाल कर घर का एक-दो चक्कर लगा आतीं. हमने जब से होश संभाला शांता मौसी को अपने घर में परिवार की सदस्य की तरह काम करते हुए पाया. मां उन्हें कामवाली की नज़र से कभी नहीं देखती. यही वज़ह थी कि काम के सिलसिले में मां को उन्हें हुक्म देते हुए हमने कभी नहीं सुना. अक्सर, फ़ुरसत के क्षणों में पलंग पर पालथी मार कर इस तरह बतियाते हुए देखी जाती थीं मानो दोनों पक्की सहेली हों. वैसे यह बात पक्की थी कि

शांता मौसी मां की हमराज़ थी, हमदर्द थी. दोनों के बीच नि:स्वार्थ अंतरंगता की जड़ें गहरे तक उतर चुकी थीं.

बीतते वक़्त के साथ हमारे बच्चे बड़े होते गये और हमारी मसरूफ़ियत में भी आहिस्ता-आहिस्ता इज़ाफा होता गया. पारिवारिक ज़िम्मेदारियां बढ़ गयी थीं. ज़िम्मेदारियां निभाना हमारा फ़र्ज़ था. इस फ़र्ज़ को निभाने की कोशिश में हम उस फ़र्ज़ से धीरे-धीरे दूर होते गये जो मां-पापा के प्रति बनता है. मतलब शुरूआती समय में हम सपरिवार सप्ताह-दो सप्ताह के अंतराल में मां-पापा के पास पहुंच जाते थे. अब चार-छः महीने के बाद बमुश्किल समय निकाल पाते थे. इस बीच बड़े भइया का तबादला भी हो गया. इस वजह से वे कुछ ज़्यादा ही दूर हो गये. हां, फ़ोन पर हाल-समाचार लेते रहते थे. घर आने-जाने का सिलसिला धीमा हो जाने से मां मायूस तो हो गयी थीं लेकिन इसका मलाल कभी ज़ाहिर नहीं करतीं और न कभी शिकायत. फ़ोन पर इतना ज़रूर कहती 'समय मिले तो आना !'

एक दिन अचानक पापा ने हमें फ़ोन पर बताया कि मां बाथरूम में फिसल कर गिर गयी. कमर में अच्छी-ख़ासी चोट आयी है. क़रीबी शहर के एक प्राइवेट अस्पताल में भर्ती कराया गया है. ख़बर मिलते ही घबड़ाकर जैसे थे वैसे ही, वाहनों का इंतज़ाम कर एक के बाद एक हम तीनों भाई सीधे अस्पताल पहुंचे. मां बेड पर अचेत पड़ी थीं. पापा ने बताया, 'चक्कर खाकर गिर गयी.' पापा से कुछ और जानकारियां लेकर हम ऑन ड्यूटी डॉक्टर के पास पहुंचे.

'सर , बेड नं.५ की पेशेंट....

'मिसेज़ शोभा?'

'जी, सर !'

'उनका ब्लड प्रेशर हाई हो गया है. कमर के अलावा सर पर भी चोट है. सीटी स्कैन हुआ है, शाम तक रिपोर्ट आ जाएगी.'

हम सभी बड़ी बेसब्री से रिपोर्ट का इंतज़ार करने लगे.

शाम को सीटी स्कैन की रिपोर्ट जानकर हमें ऐसा लगा जैसे किसी ने हमारे सर पर हथौड़ा दे मारा हो. हमारे हाथ-पांव फूल गये. 'ब्लड क्लॉट' का नाम सुनते ही हमारी कंपकंपी छूट गयी. हम सब पर जबर्दस्त घबड़ाहट तारी हो गयी. उस पर ऑन ड्यूटी नर्स की बातें सुनकर हमारी घबड़ाहट में और भी इज़ाफा हो गया, 'और भी कुछ

कम्प्लेंटस की संभावना है. टेस्ट के लिए ब्लड ले लिया गया है.'

रात हमारे लिए बहुत भारी थी. नींद कोसों दूर थी. अभी से ही हमारा धैर्य टूट रहा था. ब्लड क्लॉट के बारे में सोच-सोच कर हम डर रहे थे. इतना तो तय था कि अब मां को एक लंबी चिकित्सीय प्रक्रिया से गुज़रना होगा.

सुबह ब्लड टेस्ट की रिपोर्ट जानकर हमें ऐसा लगा जैसे हम पर वज्रपात हुआ है — 'हाई लेबल शुगर, पोटाशियम की कमी, यूरिन इन्फेक्शन.' हमें मालूम था शुगर लेबल बढ़ जाने से अन्य शारीरिक तकलीफ़ों के साथ दिल का दौरा भी पड़ने की संभावना रहती है. पोटाशियम की कमी से स्मरण शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, अर्थात 'मेमोरी लॉस'. ...यूरिन इन्फेक्शन से किडनी को ख़तरा हो सकता है. उफ़ ! सोच-सोच कर हम हलकान हुए जा रहे थे. इतनी सारी बीमारियां एक साथ! कैसे झेल पाएगी मां इन्हें? हालांकि मां की बीमारी कोई अप्रत्याशित नहीं थी और न कोई अजूबा था. दुनिया की हर शै बीमार होती है. लेकिन वह अपनी शारीरिक समस्याओं से घिर कर इस हालत में आ जाएंगी ऐसा हमने नहीं सोचा था. तमाम तरह की घरेलू परेशानियों को शांत चित होकर अपनी सूझ-बूझ से सुलझाने वाली मां सोचने-समझने की क्षमता खो कर इतनी लाचार कभी नहीं दिखी.

हमने अस्पताल के सी. एम. ओ. से गुज़ारिश की कि मां के इलाज़ में कोई कोताही बरती नहीं जानी चाहिए. ख़र्च

की परवाह न करें. मां स्वस्थ हो जाना चाहिए.

घर पर रहते हुए हमें पंद्रह दिन हो गये बड़का भइया ऑफिस में सिक रिपोर्ट सबमिटकर आ गये थे. हम दोनों तो लीव एप्लीकेशन भी नहीं दे पाये थे. फ़ोन पर ही इत्तला दी थी. इस बीच मेरी पत्नी ने एक प्राइवेट स्कूल ज्वाइन कर लिया था. वह ट्रेंड टीचर थी. इसलिए उसे नौकरी मिलने में दिक़्क़त नहीं हुई. उसे भी छुट्टी की अर्ज़ी देने का समय नहीं मिला. इसके अलावा बच्चों की पढ़ाई भी ठप्प पड़ गयी थी. अगले महीने से सेकेंड टर्मिनल की परीक्षाएं शुरू होने वाली थीं. ऐसे में रेगुलर क्लास अटेंड करना ज़रूरी होता है. नौकरी और बच्चों की पढ़ाई की चिंता में हम घुले जा रहे थे. पता नहीं कब हालात सामान्य होंगे. अनिश्चितता की स्थिति से उबरने का कोई आसार नजर नहीं आ रहा था.

इधर पापा की भी हालत अच्छी नहीं दिख रही थी. हालांकि उन्हें कोई शारीरिक तकलीफ नहीं थी. लेकिन मां की ऐसी बीमारी से उपजी उनकी मानसिक पीड़ा को हम महसूस कर सकते थे. वैसे भी पापा कम बोलने वाले इंसान थे. अब तो उन्होंने एकदम चुप्पी साध ली थी. केवल सूनी-सूनी आंखों से हमें निहारते रहते थे. शायद, आने वाले दिनों में मां की ग़ैर मौजूदगी की कल्पना उन्हें धीरे-धीरे तोड़ रही थी. मां हमारे साथ पापा को भी मज़बूती के साथ संभाले रखती थी. उम्र की इस गहराती शाम में अकेले चलने की लाचारगी उनकी आंखों में देखी जा सकती थी.

उस दिन हम आशंकाओं, दुश्चिताओं से ऐसे घिरे जैसे हमें किसी ने कांटेंदार जंजीरों से बुरी तरह जकड़ दिया हो. संकट और विपत्ति से आप जब घिरे हों तो दिलो-दिमाग़ दुश्चिंताओं की ओर तेज़ी से दौड़ता है, हमेशा दहशतज़दा रहता है. सकारात्मक सोच को अपने आप घुन लग जाता है. मुसीबतों के दौर में हिम्मत न हारने जैसे क़िताबी जुमले, चिंतकों के उपदेश एक ओर धरे रह जाते हैं. हुआ यह कि अस्पताल के सी. एम. ओ. ने हमें अपने चैंबर में बुला भेजा था. किसी तरह हम अपने जी को कड़ा करने की कोशिश करते हुए उनके चैंबर में दाख़िल हुए. उन्होंने हमें बाइज़्ज़त बिठाकर साफ़ लहजे में, विनम्रतापूर्वक जो कहा उसे सुनकर हम हताशा के अंधकूप में डूबने–उतराने लगे. ज़ाहिर था वे हमें अंधेरे में नहीं रखना चाहते थे. वे चाहते तो इलाज के नाम पर मां को लंबे समय तक अस्पताल में रखकर हमारा आर्थिक दोहन कर सकते थे, जैसा कि ज़्यादातर अस्पतालों में देखने को मिलता है. उन्होंने जो कहा उसका सार यही था कि दवाइयां देकर ब्लड क्लॉट रिमूव करने की कोशिश जारी है. लेकिन अगर इससे सफलता नहीं मिलती तो ऑपरेशन ही एकमात्र उपाय है जो अभी कतई संभव नहीं. वजह थी, मां के शरीर में एक साथ कई बीमारियों की उपस्थिति. ऑपरेशन का 'रिस्क' न लेने की सबसे बड़ी वजह की ओर जो उन्होंने इशारा किया, वह थी मां का उम्रदराज़ होना. हम साफ़ देख रहे थे मां बेहद कमज़ोर हो गयी थी. इतने ही दिनों में उनकी देह सूख कर बेड पर चिपक गयी थी. सच में, सिकुड़ती, निचुड़ती देह को देखते हुए कोई भी डॉक्टर ऑपरेशन का रिस्क कैसे ले सकता था. सी. एम. ओ. की आगे की सूचना हमें बेहद मायूस करने के लिए काफ़ी थी, 'देखिए एक और प्रॉब्लम हम देख रहे हैं!'

'वो क्या सर?'

'बॉडी के तमाम ऑर्गन्स धीरे-धीरे फेल हो रहे हैं. हमारी मेडिसिन्स का प्रॉपर प्रभाव नहीं पड़ रहा है.'

'तो क्या करें सर?'

'वैसे मेरे अस्पताल में अपनी मदर का इलाज़ कॉन्टीन्यू रखना चाहते हैं तो मुझे कोई एतराज़ नहीं, ...बट फ्रेंकली एंड प्रेक्टिकली स्पीकिंग मेरी एडवाइज़ यही रहेगी कि उन्हें घर ले जाएं ....घर और आप लोगों के बीच रहकर उनको मानसिक शांति मिलेगी. इस वक़्त जो कंडीशन है, अपने लोगों की 'सेवा' की मांग करती है. इससे उनको राहत मिलेगी. सब मिलकर उनकी सेवा कीजिए, उन्हें चैन की आख़िरी नींद आएगी. ...वैसे आप लोग चाहें तो मदर को किसी दूसरे हॉस्पिटल में शिफ़्ट करा सकते हैं. बट, आई थिंक...'

डॉक्टर का संकेत हम समझ गये थे. स्पष्ट था, एक साथ इतनी सारी बीमारियों का हमला मां बर्दाश्त नहीं कर पा रही थी. बीमारियों से लड़ने की क्षमता खो बैठी थीं.

घर के छोटे से आंगन में हम सब सर झुकाए बैठे थे. डॉक्टर की बातें हमारे मन में उमड़-घुमड़ रही थीं. आसन्न समस्या के दरिया में डूब-उतरा रहे थे. मां को घर लाना है... पूरे परिवार को मां की आंखों के सामने रहना है. जब तक सांस है तब तक देखभाल करनी है. उधर नौकरी ...बच्चों की पढ़ाई का नुक़सान ..सामने परीक्षाएं. ...एक समस्या अपने साथ कई अन्य समस्याएं भी ले आती है. एक समस्या का निपटारा कर हम इस मुग़ालते में आ जाते हैं कि

चलो, बला टल गयी. परंतु नहीं, उस समस्या से जुड़ी और भी समस्याएं किसी ज़िद्दी, उद्दंड बच्चे की तरह शोर मचाते हमारे आस-पास उछल-कूद मचाती रहती हैं. ....घर की बहुओं के हाव-भाव देखकर यही समझा जा सकता था कि सबसे ज़्यादा वे ही चिंताग्रस्त हैं. लेकिन नहीं, उनकी चिताओं में मां की बीमारी नहीं थी. उनके फ़िक्रमंद होने की ख़ास वजह थी ...मां को अस्पताल से घर ले आया जाना. मां की घर वापसी का मतलब वे अच्छी तरह समझ रही थीं. उनकी व्यस्तता में बढ़ोत्तरी तो होनी ही थी, इस अनिश्चितता की हालत में और कितने दिन बिताने होंगे — यह फ़िक्र भी उन्हें परेशान किये जा रही थी.

बहुत देर से पसरी चुप्पी को बड़का भइया ने तोड़ा. अपने भीतर के कोलाहल को रोककर हम सब उनसे मुख़ातिब हुए.

'सिक मेमो देकर आया हूं. बहुत दिनों तक बीमार रहना भी मुश्किल है. मेडिकल लीव भी ज़्यादा नहीं है. विदाउट पे हो जाऊंगा.' थोड़ा ठहर कर उन्होंने एक लंबी सांस ली और अपनी बात को आगे बढ़ाया, 'अगले सप्ताह ऑडिट इंस्पेक्शन है. मेरी मौज़ूदगी बेहद ज़रूरी है. ऐसे में यहां कैसे रह सकता हूं.'

बड़ी भाभी ने साथ दिया, 'मां को अपने साथ ले भी तो नहीं जा सकते. दो छोटे–छोटे कमरों वाला क्वार्टर है, घर में तिल रखने की जगह नहीं है.'

फिर एक बार हम सब के बीच ख़ामोशी पसर गयी. किसी परिवार में कोई मुसीबत आन पड़ती है तो सबसे पहले बड़े सदस्य की ओर उम्मीद भरी नज़रों से देखा जाता है. कहने को तो पापा ही बड़े सदस्य और मुखिया थे. लेकिन सब जानते थे, घर की समस्याओं, मुसीबतों के निबटान में उनकी अब तक कोई भूमिका नहीं रही है. अब तो इस योग्य भी नहीं रहे. हर वक़्त हम सब को निर्लिप्त आंखों से निहारा करते थे. ऐसे में बड़े भाई होने के नाते भइया को अपनी भूमिका निभानी चाहिए थी. पर यहां तो वे अपनी मज़बूरियों का पिटारा खोल कर बैठ गये थे.

बड़े भइया और भाभी बोलकर फारिग हो गये थे. मझली भाभी और मेरी पत्नी कसमसा रही थीं और हमें बार-बार घूर रहीं थीं. उनके इस तरह घूरने का मतलब हम समझ रहे थे.

'मैं सरकारी दौरे पर रहता हूं ...नेचर ऑफ़ वर्क ही ऐसा है.' मझले भइया के बोल फूटे. लड़खड़ाती ज़ुबान में उन्होंने खुद को जारी रखा, 'इस महीने के अंत तक मेरे वर्क ज्यूरीडिक्शन में कुछ इम्प्लॉयीज़ के रिटायरमेंट केस हैं. इन सब को डील कर फ़ाइलें सबमिट करनी हैं.

दोनों भाइयों की मंशा साफ़ थी. वे यही चाह रहे थे कि मां की सेवा टहल के लिए छोटा भाई ही सपरिवार घर पर रहे. दोनों ने अपनी–अपनी मज़बूरियों का बख़ान कर कन्नी काट ली थी. मुझे ऐसा लगा, दोनों भाई ज्येष्ठ होने का फ़ायदा उठा रहे हैं और मुझ पर घर पर रहने का अपरोक्ष दबाव भी बना रहे हैं. यह एहसास जब मुझ पर हावी हो गया तो मैं असंयत हो गया. लेकिन ख़ामोश रहा. मेरे पास भी कहने को बहुत कुछ था. उन्हें उगल कर कोई 'सीन' क्रिएट नहीं करना चाह रहा था. अचानक जब दोनों भाभियों के बेफ़िक्र चेहरे और उन पर अठखेलियां करती मुस्कानों पर नज़र पड़ी तो मैं एकबारगी फट पड़ा, 'ये क्या बात हुई? आप दोनों अपनी-अपनी नौकरियों का रोना रहे हैं. घर पर न रहने की मज़बूरियां बता रहे हैं, मेरी नौकरी क्या नौकरी नहीं है? आप दोनों की नौकरियों से ज़्यादा सेंसेटिव जॉब है मेरी. अनऑथराइज्ड एबसेंस मेरी जॉब को निगल सकता है. वैसे, यह बताने की ज़रूरत नहीं कि मां-बाप का अकेला बेटा नहीं हूं. आप दोनों का तो मुझसे ज़्यादा फ़र्ज बनता है, बड़े होने के नाते. ऐसे कैसे हो सकता है कि आप दोनों यहां से फारिग होकर अपने-अपने परिवार में रच – बस जाएं और मैं यहां सब कुछ छोड़कर घर की जिम्मेदारियां उठाता रहूं? नहीं चलेगा ऐसा. सब को रहना होगा यहां, एक साथ!' उबलकर मैंने एक ही सांस में अपनी बात उगल डाली.

देखते ही देखते, घर में मां को रखकर उनकी सेवा-टहल करने के मामले को लेकर हमारे बीच धीरे-धीरे ज़ुबानी जंग छिड़ गयी. घर का माहौल बेहद कड़वा और कसैला हो गया. बहुएं भी ज़ुबानें चलाने लगीं. उनकी ज़ुबानें जब चलीं तो रुकने का नाम ही नहीं ले रही थीं. यह घर किसी समस्या के निपटारे को लेकर बेहद अशोभनीय स्थिति का सामना पहली बार कर रहा था. अप्रिय शोर से यह घर हतप्रभ था.

'बंद कीजिए ये चिल्ल–पों... बहुत हो गया बस!' हम सब इस आवाज़ से मुख़ातिब होकर चौंके. ये शांता मौसी थी. बहुत देर से वह ख़ुद को काबू किये हुए थी. जब बर्दाश्त से बाहर हो गयी तो फट पड़ी, 'छोटा मुंह, बड़ी

बात!.....हमको तो लगता है आप सबकी मति मारी गयी है. बहुत बड़ा पाप कर रहे हैं आप लोग! भूले जा रहे हैं कि वो आप लोगों की मां है... कोई ग़ैर नहीं. परेशानियों में भूल गये कि परेशानियां क्या होती हैं, मां ने कभी आप लोगों को जानने दीं? एक मुसीबत आयी नहीं कि सब अपना-अपना रोना ले कर बैठ गये, यह जानते हुए कि मां कुछ ही दिनों की मेहमान है. आप लोगों की परेशानियां मां से बड़ी हो गयीं. क्या यही दिन देखने के लिए मां ने आप लोगों को गर्भ में पाला था?' शांता मौसी कुछ पल के लिए रुकीं. उनकी सांसें धौंकनी जैसी चल रही थीं. चेहरे की सख़्ती और लाल होते कान से उनकी अनियंत्रित उत्तेजना को समझा जा सकता था.

'हाथ जोड़कर विनंती करती हूं, ले आइए शोभा दी को. हां, आप सबको परेशान होने की ज़रूरत नहीं. मैं देख लूंगी... सब देख लूंगी अकेले. चले जाइए अपने–अपने घर और बचाइए नौकरियां.'

झन्नाटेदार तमाचा मारा था शांता मौसी ने हम सब के गालों पर. हमारी बोलती बंद हो गयी. उनसे आंखें मिलाना मुश्किल हो गया था. घर में फिर एक बार क़ब्रिस्तानी सन्नाटा पसर गया. सन्नाटे को भेदने वाली शांता मौसी की आवाज़ हमारे कानों में पड़ी, 'कल सुबह होते ही शोभा दी को ले आइए! ....फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं!' शांता मौसी किसी अभिभावक की तरह हमें हिदायत देकर अपने काम में जुट गयीं.

सुबह हुई. सब अपनी–अपनी दिनचर्या में जुट गये. सबकी ज़ुबानों पर ताले लगे हुए थे. चुप्पी और संवादहीनता की ऐसी स्थिति घर में पहली बार पैदा हुई थी. बीच-बीच में रसोई घर से बर्तनों को असंयत ढंग से पटकने की आवाज़ ख़ामोशी को भेद रही थी. साफ़-सफ़ाई के क्रम में शांता मौसी द्वारा बर्तनों को पटकने वाली असामान्य हरक़त हम लोगों के प्रति नाराज़गी का प्रकटीकरण ही था. हम सब समझ रहे थे.

अस्पताल का विज़िटिंग टाइम सुबह के दस से ग्यारह तक था. मां को घर ले आने वाले मामले से ताल्लुकात कोई फ़ैसला अभी तक नहीं हुआ था. मसला ज्यों–का त्यों था. हम एक दूसरे से नज़रें चुरा रहे थे. शांता मौसी की हिदायत हमारे कानों में गूंज रही थी. इस हिदायत को अमल में कौन लाये? हम तो एक दूसरे से कतरा रहे थे. क़ायदे से तो बड़े भइया को आगे आना चाहिए था. इस पर बातचीत भी होनी चाहिए थी.

मैं व्यक्तिगत रूप से शांता मौसी की हिदायत का पालन करने के पक्ष में नहीं था. दोनों भाई इस बारे में क्या सोच रहे थे, मुझे मालूम नहीं. मरणासन्न मां को शांता मौसी के भरोसे छोड़ना नालायकी और निर्लज्जता की हदें पार करना जैसा लग रहा था. पापा भी तो सामान्य नहीं थे. इस उम्र में उनकी भी सेवा की ज़रूरत है. अगर शांता मौसी की बात मान लेते हैं तो पड़ोसियों, परिचितों की जली-कटी तो सुनने को मिलेगी ही, रिश्तेदारी में जो थू-थू होगी, सो अलग. ज़िंदगी की आख़िरी सांस लेने वाली मां को उसके तीन जवान बेटे और बहुओं द्वारा यूं छोड़ कर चले जाना कुछ ऐसा ही होगा जैसे ख़ून के रिश्ते की हत्या में अपने ही लोगों का शामिल होना. यह कुकृत्य अक्षम्य अपराध होगा.

'अभी तक कोई फ़ैसला नहीं किया आप लोगो ने?' शांता मौसी की आवाज़ ऊंची थी. कुछ–कुछ रूखापन लिये. किचन से ही उन्होंने आवाज़ लगायी थी. उसे कोई ज़वाब नहीं मिला. ऐसा नहीं कि उनकी आवाज़ हमारे कानों तक नहीं पहुंच पायी थी. सबने सुना था. हम एक दूसरे से उम्मीद कर रहे थे शांता मौसी को ज़वाब देने की.

'ठीक है, आप लोग नहीं जाते तो हम ही चले जाते हैं अस्पताल. बड़े डॉक्टर को ख़बर कर दीजिए. हम ख़ुद ही गाड़ी का इंतज़ाम कर लेंगे!'

इसी बीच फ़ोन बजने की आवाज़ ने सबके कान खड़े कर दिये, एक अज़ीब क़िस्म की, उदासी भरी धुन! पता नहीं, क्यों पसंद है बड़े भइया को यह रिंगटोन.

'क्या?...कब?...अभी-अभी?'

हम सब अपने–अपने कमरों से भरभरा कर निकल आये. ख़बर अस्पताल से ही आयी थी.

इस बार भी मां ने सहज ढंग से हमारे झगड़े का निपटारा कर दिया था.

उन्होंने हमेशा के लिए आंखें मूंद ली थीं.

अपर बेनियासोल, पो. आद्रा,
जि. पुरुलिया,
(पश्चिम बंगाल) ७२३१२१,
मो.: ९८००९४०४७७,
Email- martin29john@gmail.com

जिजीविषा मात्र शब्द नहीं

मंगला रामचंदन

३ जून १९४४, अहमदाबाद,
स्नातक (गणित).
हिंदी में लिखने वाली तमिल भाषी, मध्य प्रदेश में बसे परिवार की सदस्या. पढ़ने के अत्यधिक शौक़ तथा आसपास के वातावरण ने धीरे-धीरे लेखन की ओर प्रवृत्त किया. पिछले चार दशकों से सृजनरत. कहानियां, आलेख, हास्य-व्यंग्य व लघुकथाओं का निरंतर प्रकाशन.
आकाशवाणी भोपाल व इंदौर से कहानियों का लगातार प्रसारण. आकाशवाणी पर महिला कार्यक्रमों का कुशलतापूर्वक संचालन. भोपाल दूरदर्शन के कार्यक्रमों में भागीदारी. दस कहानी-संग्रह प्रकाशित व कुछ कहानी-संग्रहों का संपादन. कुछेक रचनाएं उर्दू, मराठी, तमिल व अंग्रेज़ी में अनुवादित. सुब्रह्मण्यम भारती के जीवन पर एक शोध पुस्तक प्रकाशित व प्रशंसित. कहानियां व आलेख स्कूल व कॉलेज़ के पाठ्यक्रमों में शामिल किये गये. एक व्यंजन पुस्तक (दक्षिण भारतीय व्यंजन) प्रकाशित.
नवसाक्षर व प्रौढ़ शिक्षा लेखन में अनेक पांडुलिपियां पुरस्कृत. चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट से कहानी प्रकाशित व पुरस्कृत.
विगत वर्षों में अनेक पुरस्कार व सम्मान प्राप्त.

अखबार में फिर उसी तरह की ख़बर देख कर केकरे सर दुखी और गंभीर हो गये. जिस सोच के तहत उन्होंने स्कूल की नौकरी ली थी उस उद्देश्य को पूरा न करने का दुख उन्हें कातर कर रहा था. गणित में पी-एच. डी. थे और विश्वविद्यालय में उन्हें आसानी से व्याख्याता का पद मिल सकता था. पर उन्हें तो स्कूल के छोटे और किशोर बच्चों के साथ मिल कर अपने लक्ष्य को पाना था. जब सुधीर दसवीं कक्षा में पढ़ता था, सुधीर केकरे, उसके सबसे क़रीबी, प्रिय मित्र ने परीक्षा में असफल होने पर ट्रेन के नीचे आकर आत्महत्या कर ली. महेंद्र के इस क़दम से सुधीर टूट गया था और उसे अपने आप को संतुलित करने में बहुत वक़्त लगा था. सुधीर कक्षा का होनहार छात्र था और गणित में तो कक्षा का श्रेष्ठतम विद्यार्थी था. महेंद्र पढ़ाई में कमज़ोर ही था, ख़ास कर गणित में. सुधीर उसकी पूरी तरह मदद करता था और परीक्षा में पास होने लायक तैयार कर देता था. पर दसवीं में वो पास होने लायक नंबर भी नहीं ला पाया.

सुधीर को असफल छात्रों का ऐसा रास्ता चुनना दुखी से भी ज़्यादा ग़ुस्सा दिलाता था. वो सोचते कि एक समूचा जीवन मात्र एक असफलता से हार मान जाये, बिना यह सोचे समझे कि उसके जन्मदाताओं और क़रीबियों पर क्या असर पड़ेगा! शिक्षा मात्र अलग-अलग पीरियड में अलग-अलग विषयों की पढ़ाई ही है क्या? शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य तो यह होना चाहिए कि बच्चे एक सार्थक, सही दिशा में सोचें और घर-परिवार, समाज के लिए उपयोगी इकाई बन सकें. छोटी-छोटी असफलता तो एक तरह से भविष्य की सफलता की राह बनाती है. गुबार की तरह एक गहरी सांस बाहर छोड़ी और अख़बार को पटक दिया. उन्हें तैयार होना है और स्कूल भी जाना है.

प्रमिला अपने पति की मनोस्थिति को बहुत अच्छे से समझती थी. जब कोई परिचित-अपरिचित या मात्र ख़बरों में ही पढ़-सुन कर उन्हें इतनी ठेस

पहुंचती, मानों उन्हीं की ग़लती है कि वो इन हादसों को रोक नहीं पा रहे हैं. अनमने मन से खाना खाते हुए पति को तसल्ली देते हुए बोली — 'दुनिया में हो रही हर आत्महत्या के लिए आप ज़िम्मेदारी नहीं ले सकते. यूं ही स्वयं पर लानत भेज कर ख़ुद भी नैराश्य के भंवर में फंस जायेंगे.'

'पता नहीं मेरी हालत का अंजाम क्या होगा, पर जो बात मेरे दिल और दिमाग़ पर बार-बार दस्तक देती है उसे अनसुनी कैसे करूं? ये बताओ प्रमिला ये बच्चे सही में अपने हालातों से इतने तंग आ जाते होंगे कि इनकी जीने की इच्छा ही ख़त्म हो जाये? ऐसे तो जिजीविषा शब्द मात्र शब्द कोष में दफ़न हो जायेगा. इतना सुंदर, लालित्य पूर्ण शब्द जिसको जीवन का मूलमंत्र मान कर पल्लवित और पोषित करना चाहिए और देखो क्या मज़ाक बना दिया.'

वाक्य के अंत तक आते-आते उनके चेहरे पर आये निराशा के भाव प्रमिला को रोने को मज़बूर कर रहे थे. पर एक पढ़ी-लिखी विदुषी महिला की तरह उसे धैर्य और साहस का परिचय देना होगा. वरना सुधीर का सपना, सुधीर की तपस्या अपने उद्देश्य तक कैसे पहुंचेगी?

प्रमिला सुधीर से पहली बार इंटर कॉलेज़ परिसंवाद प्रतियोगिता में मिली थी. मंच पर वह प्रथम घोषित हुई थी पर सुधीर को विषय पर आधिकारिक और व्यावहारिक ज्ञान अधिक था. विषय था 'किशोरों में डिप्रेशन और आत्म हत्या के बढ़ते आंकड़े.'

जिन्होंने भुगते हुए लोगों को पास से देखा है या जो भुक्त भोगी का क़रीबी रहा हो तो स्वाभाविक था कि विषय को अधिक संवेदनशील होकर समझा होगा. वरना तो गूगल और विकिपीडिया पर एक क्लिक पर सारी जानकारी मिल जाती है. प्रमिला ने भी वहीं से आंकड़ों के साथ जानकारी जुटायी थी. अपने कथन की समाप्ति उसने इंडोनेशिया की यूनिवर्सिटी ब्राविजया की हेनीडी विंडरवाटी के कथन से की — 'दूसरों से प्यार करना ज़रूरी है पर स्वयं से प्यार करना बहादुरी है. किसी और के लिए लड़ने से पहले ख़ुद के लिए लड़ना होगा.' कार्यक्रम के अंत में चाय-पान के दौरान सुधीर ने प्रमिला को प्रथम स्थान पर रहने की बधाई दी. प्रमिला संकोच से बोली — 'आपको भले ही तृतीय स्थान मिला पर असली हक़दार तो आप हैं, प्रथम स्थान के.' 'वो कैसे ?' — सुधीर ने प्रमिला के चेहरे पर ध्यान से देखते हुए पूछा कि कहीं मज़ाक तो नहीं उड़ा रही है.

'आप जिस तरह संवेदशीलता से विषय की गहराई में जाकर कारण, ख़तरों का विवरण और साथ में हल भी सुझा रहे थे, उसने विषय की गंभीरता को उभार दिया.'

'आपको ऐसा लगा यह मेरे लिए बहुत है. मुझे तो इसी क्षेत्र में आगे भी कुछ करना है. नहीं-नहीं, डॉक्टरेट वग़ैरह नहीं, बल्कि ठोस कार्य जिससे डिप्रेशन और आत्महत्या की प्रवृत्ति पर रोक लग सके.' — सुधीर उत्साह से भर गया, मानों अपने विचारों को कार्यरूप में परिणत करने की आशा जाग गयी हो.

'आपने जिस आख्यान के बारे में जिक्र किया था क्या वो सही में हुआ होगा? बहुत दिलचस्प था.'

'एक बिंदु या विषय पर अलग-अलग लेखक अपने विचार रखते हैं. उक्त लेखक का कहना था कि अगर गुरू द्रोणाचार्य सुयोधन को सदा टोकते नहीं रहते तो महाभारत का सार ही बदल जाता. अगर कुंती द्रोण को पांडवों के राज्य में आचार्य पद का लालच नहीं देती तो शायद द्रोण का व्यवहार अलग होता. सुयोधन जो कि सभी राजकुमारों में सबसे सुंदर दर्शनीय था, कोमल उदार था, उसे नीचा दिखाने के चक्कर में उसमें कुंठा भर दी और वो सुयोधन से दुर्योधन हो गया.'

'ओह!' - प्रमिला आशा से उस पर आंख गड़ाये हुए थी कि आगे कुछ बोलने वाला है. सही में सुधीर अनजाने में प्रमिला से खुल गया — 'बच्चों की आपस में तुलना करना, किसी भी बच्चे को कूपमंडूक या ग़लत नाम देकर छोटा या कमतर महसूस कराना ग़लत ही तो है. हीन भावना और निराशा ऐसे ही तो मन में घर कर जाती है.'

दो क्षण थम कर उदास स्वरों में बोला — 'स्कूल में हमारे शिक्षकों के असंवेदनशील व्यवहार से ही तो मैंने अपने सबसे प्यारे दोस्त महेंद्र को खोया.'

धीरे-धीरे वे दोनों फ़ोन पर लंबी-लंबी बातचीत में अपने विचारों का आदान-प्रदान करने लगे. दोनों में एक सुंदर-दोस्ताना रिश्ता कायम हो गया. उसके विचारों से प्रमिला इतनी प्रभावित हुई कि उसने मन ही मन तय कर लिया कि उसे सुधीर की इस तपस्या और हवन में पूरे मन से साथ देना होगा. दोनों के विषय और कॉलेज़ अलग-अलग थे, पर इस बिंदु पर समान रूप से सहमत और प्रतिबद्ध थे.

सुधीर ने पीएच. डी. कर ली थी और तय किये

अनुसार स्कूल में ही शिक्षक बन गया. प्रमिला बैंक में नौकरी करने लगी. सुधीर की वृद्धा मां को अपनी इस इकलौती बावले संतान की चिंता बनी रहती थी. अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते जुनून के आगे सुधीर सर को कुछ और सूझता ही नहीं था. प्रमिला को भी उनकी इसीलिए चिंता होती थी कि वे स्वयं की ओर से एकदम बेफिक्र थे. उनकी मां की इच्छा यही थी कि प्रमिला उनकी बहू बन कर आ जाये, पर बेटा मौक़ा ही नहीं देता था कि वे खुल कर बात कर पायें. पहल प्रमिला की ओर से ही हुई. भले ही वह उनकी पत्नी बन कर उस घर में आयी पर उसके मन में उनके प्रति एक ममतामयी भावना भी थी. वर्तमान युग में इतने ईमानदार और उद्देश्यों से बंधे होने पर अव्यावहारिक होने का ठप्पा तो लगेगा ही. प्रमिला उनको अपना पूरा-पूरा सहयोग सुरक्षात्माक तरीक़े से करना चाहती थी.

सुधीर सर बच्चों को रोचक तरीक़े से गणित सिखाते थे जिससे बच्चे उनकी कक्षा को कभी 'मिस' नहीं करते थे. प्रतिदिन पांच मिनट बच्चों से उनकी परेशानियों के बारे में बातें करते, पढ़ाई के अलावा घर की आर्थिक स्थिति या स्कूल आते-जाते कोई परेशानी होती हो, यानि बच्चे अपनी छोटी-बड़ी सारी परेशानी बिना संकोच के उनसे साझा कर लेते थे. सुधीर सर को हमेशा लगता रहता था कि छात्रों को घर और स्कूल दोनों जगह अपनापन मिलना चाहिए. घर पर माता-पिता और घर के अन्य सदस्यों के साथ संवाद होते रहना चाहिए और स्कूल में शिक्षकों से बिना भय के संवाद होना चाहिए इससे उनके अंदर पॉज़िटिविटी आती है और इन दो 'सपोर्ट' से वो नैराश्य की ओर नहीं जाते हैं.

एक दिन प्रमिला अनमनी-सी बहुत ख़राब मनस्थिति में थी, सुधीर ने उसके चेहरे के भाव देखकर कारण पूछा तो दुखी स्वर में रोष से बोली — 'मेरे कलीग की पंद्रह वर्षीय बेटी ने चौथी मंज़िल से कूद कर आत्महत्या करने की कोशिश की. अब यह नहीं पता कि आगे सही सलामत कुछ करने योग्य रहेगी या सब पर भार बन कर रहेगी.'

सुधीर का मन ख़राब हो गया, दुखी स्वर में बोला — 'जो उम्र सबसे अधिक क्रियाशील रहते हुए उपलब्धि पाने और सफलता तक पहुंचाने की होती है, उसी का सर्वनाश हो जाता है. अपने आप को दुस्साहस या ग़लत साहस के लिए तैयार कर लेते हैं, पर अच्छे या सही काम के लिए उसके दस प्रतिशत का प्रयास भी नहीं करते हैं. मैं

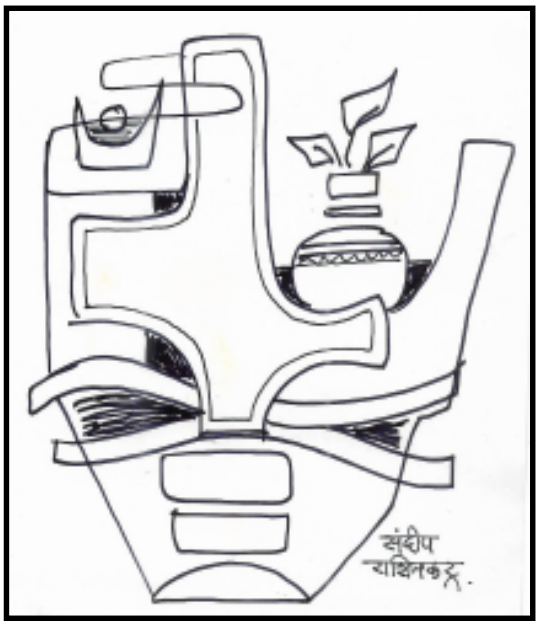

तो कहूंगा ये सब कायर हैं, मेहनत और कोशिश करने से बचते हैं.'

'वही तो! अब इस नीतू और उसके परिवार की हालत का क्या करें? सिर्फ़ तसल्ली देने से तो कुछ सुधरने वाला है नहीं.'

'सच कहूं तो बहुत बार इन बच्चों पर ग़ुस्सा आता है कि आगे-पीछे कुछ नहीं सोचते. ना माता-पिता का ना घर के दूसरे सदस्यों को, बस स्वयं की कोई इच्छा पूरी ना होना ऐसे क़दम उठाने का वायस बन जाता है.'

'पंद्रह वर्ष में तो बचपन भी पूरी तरह नहीं जा पाता और ये प्यार में धोखा खाकर जान देने चली.'

'क्या? ' — सुधीर सर चौंक उठे और जोर से बोल पड़े. 'और क्या, 'आई लव यू' तो जुमला बन कर रह गया. अंग्रेज़ी ना सीखने या ग्रेस से पास करने के लिए लड़ मरते हैं, पर इस वाक्य को ऐसे बोलते हैं मानों लंदन से सीधे आ रहे हों. यही नहीं अंग्रेज़ी के जिन शब्दों से परहेज करना चाहिए उन्हें भी खुलकर, बिना संकोच मुख श्री से बिखेरते रहते हैं' — प्रमिला का क्रोध और खीझ कम नहीं हो रही थी.

'इसीलिए तो चाहता हूं कि बच्चे अपना दिल खोलकर बात कर पायें. घर पर माता-पिता और स्कूल में शिक्षक नहीं सुनेंगे तो और कौन सुनेगा! हर पीरियड में रोज़ पांच मिनट बच्चों को सुनने के लिए ही देता हूं. जब लंबी बातचीत

होनी हो तो बीच के अवकाश या कक्षा के बाद बच्चे स्वयं आकर मिलने लगे हैं. बच्चों में साहस और संघर्ष करने का जज्बा भी बढ़ गया है.' — उनकी आवाज़ की ख़ुशी और उत्साह प्रमिला के अंतस को भी छू रहे थे.

सुधीर की मां प्रमिला को बहू के रूप में पाकर प्रसन्न थी ही, अब पोता पाकर तो निहाल ही हो गयी. उसका नाम दादी ने ही रखा, स्वामी विवेकानंद के नाम पर. उनका कहना था कि विवेकशील दंपति के बेटे का नाम विवेक ही हो सकता है. विवेक के सातवें जन्मदिन के साथ ही जनेऊ की रस्म भी हो गयी. दादी तो ख़ुशी की पेंगें ले रही थीं. दो वर्ष बाद उनकी प्राकृतिक मृत्यु इस तरह हुई मानों उनके जीवन के सारे उद्देश्य पूरे हो गये हों. अंतिम दर्शन करने आने वाले उनके चेहरे पर छायी अद्वितीय शांति और आभा को देखकर ही अभिभूत हो रहे थे.

जीवन एक बंधी हुए रफ़्तार में सुचारु रूप से चल रहा था. इसका पूरा श्रेय सुधीर सर प्रमिला को देते थे, जिसने कई बार प्रमोशन लेने से नकार दिया. वो अच्छे से जानती थी कि प्रमोशन मात्र उसके अहं की तुष्टि ही हो सकती है. वरना किसी और शहर में तबादला हो जाये तो न जाने कितना कुछ बिखर जायेगा. सुधीर सर बच्चों के तो सलाहकार थे ही, अब उनके अभिभावक भी उनसे बच्चों से संबंधित सलाह लेने आने लगे. सर की दो बातों से तो छात्र और उनके माता-पिता बहुत प्रभावित हो गये. 'असफल होना बुरी बात नहीं है क्योंकि वही सफलता की, अनुभवों की पहली सीढ़ी है. शरीर और मन दोनों का ही स्वस्थ और तंदुरुस्त रहना ज़रूरी है तभी संघर्ष करने की ताकत अपने आप मिल जायेगी.'

अब तक विवेक बड़ी कक्षा में आ गया था. पिता की तरह गणित में वह सर्वश्रेष्ठ था. पर फिर भी सुधीर सर ने उसी पर विषय चुनने का दायित्व सौंप दिया था. उसके साथ बैठ कर आराम से चर्चा करना, उसकी राय लेना, उसके शौक़ और रुझान और भविष्य की योजनाओं पर तीनों सहज रूप से बात करते. इस दंपति के इसी रुख़ से विवेक उनसे बहुत प्रसन्न भी था और बहुत आदर भी करता था. कई बार विवेक अपने किसी मित्र के अभिभावक को सही सलाह देने या कोई बिंदु समझाने के लिए भी कहा करता था.

बेटे से अपने काम के लिए प्रशंसा पाने से सुधीर सर का उत्साह चौगुना हो गया.

स्कूल के बच्चों में एक आशाजनक परिवर्तन आने लगा था. बच्चों का आत्मविश्वास बढ़ा हुआ था, संघर्ष करने और आशावादी सोच का विकास भी हुआ था. पर अख़बारों में ऐसी ख़बरें आती ही थीं जिससे सुधीर सर उदास हो जाया करते थे और चाहते थे कि उनके उद्देश्य को एक विशाल यज्ञ में परिवर्तित करने के लिए क्या करें. उन्होंने निर्मल हृदय और शुद्ध मन से ही सोचा होगा तभी तो इसके लिए मौक़ा ख़ुद ब ख़ुद उनको ढूंढ़ते हुए आ गया. मानों उनकी निस्वार्थ सेवा और निष्ठा को एक विशाल फलक मिल गया हो.

स्कूल के प्रिंसिपल अपने साथ दो व्यक्तियों को लेकर अचानक घर आ गये. उन्होंने क्षमा याचना के साथ कहा — 'मुझे मिलने से पहले समय ले लेना था, पर उत्साह में और कुछ समय की कमी के कारण इन लोगों को मिलवाने तुरंत ही लेकर आ गया.'

'नहीं-नहीं' सर ऐसा कुछ भी नहीं है, आपके लिए कोई औपचारिकता थोड़ी है, आप कभी भी आ सकते हैं.' — सुधीर सर नम्रता से बोले.

'सुधीर, आप ना सिर्फ़ हमारे स्कूल के लिए बल्कि इस शहर के लिए भी मूल्यवान संपत्ति हैं. ये दो नौजवान संदीप और आमीर हैं और इन्होंने मनोविज्ञान में पी-एच. डी. की है. आपसे मिलने स्कूल समय में आने वाले थे पर किसी कारणवश स्कूल पहुंचते देर हो गयी, सो अब यहीं आ गये.'

सुधीर सर को अभी तक उनका आशय ठीक से समझ नहीं आ रहा था कि उनसे क्यों मिलना चाह रहे थे. वे संकोच और कुछ अज्ञात भय से पसीने-पसीने हो रहे थे.

तभी उनमें से एक युवक बोला — 'सर, हम आपकी बहुत इज़्ज़त करते हैं और आपके नेक उद्देश्य के बारे में भी जानते हैं निस्वार्थ भाव से अपने क़ीमती समय में से अपने इतने लंबे समय में अनगिनत बच्चों का जीवन संवारा है. हम ही नहीं पूरा शहर चाहता है कि आपका सार्वजनिक रूप से अभिनंदन समारोह हो. बस आपका एक 'हां' सुन लें बस, फिर कार्यक्रम की तैयारी कर लेंगे.'

'अरे नहीं-नहीं, मैं ये सब नहीं कर सकता, मैंने तो वह किया जो मुझे अच्छा लगा और ठीक लगा अपना उद्देश्य पूरा करना है और अभी तो उसमें बहुत कुछ करना बाक़ी है....

बेचारे सुधीर सर हड़बड़ा कर अपनी बात भी ठीक से नहीं रख पा रहे थे.

दूसरा युवक कहने लगा — 'इसे हमारा स्वार्थ समझ लीजिए. हम दोनों ने आपके कामों से उत्साहित होकर चाइल्ड सायकोलॉज़ी में स्पेशलाइज़्ड किया. सोचा था आपको सलाहकार के रूप में पदस्थ कर दोनों अलग-अलग संस्थान खोलेंगे. हम तो उसे क्लीनिक नाम भी नहीं देने वाले हैं, जिससे लोग बिदकते हैं.'

प्रिसिंपल सर ने भी बड़े प्रेमपूर्वक कहा — 'सुधीर, इन्होंने अपनी योजना जो मुझे बतायी उससे बड़े पैमाने पर बच्चों का लाभ होगा. परोक्ष रूप से तो अभिभावकों और परिवारों को ही तो फ़ायदा होगा. फिर भी अपने मन की तसल्ली के लिए पूरी योजना को तफ़सील से एक बार जाने बिना ना मत करना.'

'जी सुनूंगा, पर प्रमिला को भी इसमें शामिल करना होगा. जो भी कुछ इस क्षेत्र में या दिशा में कर पाया सिर्फ़ और सिर्फ़ उसके किये गये त्याग और एक मज़बूत पहाड़ की तरह का सहारा देने के कारण. उसकी सोच और निर्णय लेने की क्षमता अद्भुत है.' कहते-कहते उन्होंने प्रमिला को आवाज़ दी. उनकी आवाज़ देने की शैली से कोई भी समझ सकता है कि अपनी पत्नी को प्रेम ही नहीं करते सम्मान भी करते हैं.

दोनों युवकों ने विस्तार से पूरी योजना बतायी. प्रमिला जी और सुधीर सर को सबसे अच्छी बात जो लगी वह थी संस्थाओं के नाम में मनोवैज्ञानिक क्लीनिक या सायकोलॉज़िकल कन्सलटेन्सीस नहीं थी. अक्सर लोग ऐसे नामों से थोड़ा बचते हैं और आकर बात करने में झिझकते हैं कि लोग उन्हें दिमाग़ी तौर पर ठीक ना होने का तमगा न लगा दें. संदीप और आमीर ने संस्था का नाम सोचा था 'जिजीविषा संस्था' जो एकदम उचित और सटीक था. संस्था को रजिस्टर्ड करके इसकी शाखाओं का विस्तार करने की योजना भी थी. इसके अलावा हर बच्चे का एप्टिट्यूड टेस्ट, उसकी रुचि, अभिभावक की आर्थिक स्थिति आदि सारी जानकारियां कंप्यूटर में फ़ाइल में दर्ज रहेंगी. इससे भविष्य में बच्चे को किसी तरह की मदद करना आसान हो सकता है. ख़ास बात यही है कि माहौल ऐसा होगा कि बच्चा खुलकर अपनी समस्या और मन में उठते प्रश्नों को साझा करने में संकोच नहीं करेगा.

सुधीर सर ने एक मुक्ति की लंबी सांस ली मानों किसी समस्या से आज़ादी मिली हो. उनका चेहरा प्रसन्नचित्त था और उन्होंने प्रमिला की ओर जैसे ही देखा तो उसके चेहरे पर फैली मुस्कान और आंखें देखकर समझ गये कि वो भी आश्वस्त है. फिर भी उन्होंने उसकी राय जानना चाही. संदीप और आमिर ने सुधीर सर, प्रमिला और प्रिंसिपल सर के चरण स्पर्श किये और नयी शुरूआत के लिए आशीर्वाद लिया. फिर जैसे ही आमिर ने कहा — 'सर आप अपनी सुविधा बताइए उसी अनुसार अभिनंदन का कार्यक्रम रखेंगे.'

'ऐसा करो, पूरे साल भर तुम्हारी परीक्षा होगी. तुम दोनों कितना अच्छा काम करते हो, अपने उद्देश्य में कहां तक सफल होते हो ये देखने के बाद ही बाक़ी बातें करेंगे — सुधीर सर की निश्चय से भरी आवाज़ के बाद सबको सक्रिय होकर कार्य पर लगना ही था. संदीप ने कुछ शरारत और कुछ गंभीरता से कहा — 'आप तो समाज सेवा के तौर पर इस महत्ती कार्य को करते आ रहे हैं. पर हमें अपना परिवार चलाना, दुकान का किराया देना और वैज्ञानिक तरीक़ों को अपनाने के लिए यंत्र और अन्य ख़र्चों का भी हिसाब करना होगा. सो सबसे फ़ीस ली जायेगी जो उसकी आर्थिक स्थिति के हिसाब से तय होगी. पर विश्वास रखिए कि सिर्फ़ पैसों के पीछे भाग कर या पैसों के लालच में कुछ भी ग़लत नहीं होगा. अंत में बच्चों को लाभ ही मिलेगा. सर ने हंसते हुए सिर स्वीकृति में हिलाया.

६०८, आई ब्लॉक, मेरी गोल्ड,
ओशन पार्क, निपानिया,
इंदौर, (म. प्र.)- ४५२०१०
मो.न. : ९७५३३५१५०६
Email : Mangla.Ramachandran@gmail.com

पाठकों/ग्राहकों से निवेदन

कृपया 'कथाबिंब' की सदस्यता राशि मनी ऑर्डर से भेजते समय फ़ॉर्म पर अपना नाम, पता, पिन कोड सहित अंग्रेज़ी में साफ़-साफ़ लिखें. मनीऑर्डर भेजने के बाद पोस्टकार्ड पर पूरे पते सहित इसकी सूचना अवश्य दें. आपकी सदस्यता अगले अंक से लागू होगी. पते में परिवर्तन की सूचना भेजते समय कृपया नये पते के साथ पुराने पते का उल्लेख करना न भूलें.

- संपादक

राजकुमार जैन राजन की कविताएं

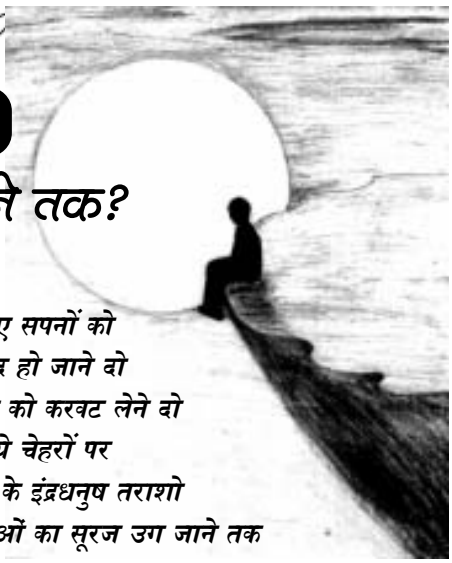

सपनों के सच हो जाने तक?

कई सपने
बांध कर रखे हैं
जीवन की कुटिया में
रौशनी की छांह तले
जिसमें संजो रखा था हौसला
नव उत्कर्ष के लिए

पानी के बुलबुलों-सी
उठती हैं छिटपुट स्मृतियां
क्या होगा कविताएं लिखकर
ज़िंदगी के अहम सवाल जब
शब्दों में ढलते ही नहीं
अक्षरों की क़ैद से
अर्थ कतराते हों जहां

उठो,
बंधे हुए सपनों को
आज़ाद हो जाने दो
मौसम को करवट लेने दो
मुरझाये चेहरों पर
सपनों के इंद्रधनुष तराशो
आशाओं का सूरज उग जाने तक

अतीत की वादियों में भटकता हुआ
मौसम बेअसर
और उग आये हों पंख पैरों में
उम्मीदों के शिशु थामे हुए
चलते जाना है...चलते जाना है
सपनों के सच होने तक!

बदली मंजिल

लिखना चाहूंगा
तुम्हारा इतिहास
अतीत से जुड़े पलों को
कुछ इस तरह
पत्थर पर उकेरूंगा
कि तुम आज भी हो
मेरे अहसासों में,

मन के रेगिस्तान में
कुरेदे गये मेरे जख़्मों को
तुमने ही सिया था प्रेम के धागे
और विश्वास की सुई से

मैं पिघलता रहा पल दर पल
तुम्हारे समर्पण से,

तुम्हारे हर सवाल का जवाब
मेरी आंखों में था
और तुम
ज़माने भर का दुःख ओढ़े
करती रही इंतज़ार
अपने अस्तित्व बोध में,

छन जाता है सुख
समय की छलनी में

साथ चलते-चलते
अचानक तुमने दिशा मोड़ ली,
रास्ता बदल लिया
मुझे भ्रमित कर
और मैं व्यथित, थका हुआ बैठा हूं
रेगिस्तान-सी चिलचिलाती धूप में,

कब तुमने शामियाना उठा लिया
और चलती बनी
न जाने किसे मंजिल मानकर
रास्ता तुमने बदला था
मंज़िल मेरी भटक गयी.

चित्रा प्रकाशन, अकोला- ३११२०५, (चित्तौड़गढ़) राजस्थान. मो.- ९८२८२ १९९१९
ईमेल- rajkumarjainrajan@gmail.com

विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर प्रकाशित.

और नदी बहती रही

सत्या शर्मा 'कीर्ति'

'सुनो मेरी पीठ पर लिख दो ना तुम फागुन के गीत,' अपनी पीठ पर से चुन्नी सरकाकर मीठी-सी हंसी हंसते हुए कहा सोनी ने.

'धत, पगली मैं कैसे?' अपनी नन्ही-नन्ही दूब-सी उगती मूंछों में सिहरन-सी महसूस हुई दीपेश को.

'क्यों, तुम क्यों नहीं?' अबकी सोनी ने नहीं उसकी आंखों की कोरों पर ठहरी पतली काजल की लकीरों ने पूछा था.

कैसे कहूं, इस बुद्धू से कि मुझे पढ़ना-लिखना नहीं आता. फिर कैसे लिख पाऊंगा पीठ पर कोई गीत?

नहीं पढ़ने का दर्द कलेजे पर तीर-सा चुभ रहा था.

शहर से साहब के साथ आया हूं, ड्राइवर हूं तो पढ़ना-लिखना आता ही होगा, यही सोचती होगी न सोनी.

वह मन ही मन बुदबुदाया.

हुंह, क्या शहर के सभी लोग पढ़े ही होते हैं? पैरों के नीचे गिरे सूखे पत्तों से खेलता हुआ वह सोचता रहा.

'उन पत्तों से परमिशन ले रहे हो का?' खिलखिला उठी सोनी.

अरे नहीं, हड़बड़ी में अचानक कुछ पत्ते पैरों के नीचे आ गये और हल्की-सी चरमराहट के साथ पत्ते भी जैसे पूछ बैठे, 'हां, अब बोलो.'

पहली बार अपनी भूरी आंखों को उठा कर दीपेश ने उसकी खुली चमकती सिलेट-सी पीठ को देखा. और फिर अपने नहीं पढ़ पाने का अफ़सोस एक उफ़नते सागर में बदल दिल के कोमल किनारे को गहरे तक भिगो गया. काश! पढ़ लेता.

कितनी बार मां जबरदस्ती खींच कर स्कूल पहुंचा देती थी किंतु पढ़ना-लिखना तो कभी सुहाया ही नहीं और ऊपर से दादी की लाड़-दुलार कि — 'हां, तो नहीं पढ़ेगा तो कौन सा पहाड़ टूट जाएगा, कौन-सा परलय आ जायेगा, कौन-सी दुनिया लुट जाएगी.'

'अरे ! दिपेशवा ले, मूढ़ी के लड्डू खा.'

बस कूदता-फांदता दीपेश दादी की खटिया पर बैठ चूड़ा-मूढ़ी के लड्डू खाता हुआ दादी से तरह-तरह की कहानियां सुनता रहता कि कैसे परियों की रानी ने ग़रीब जुलाहे को परीलोक का राजा बना दिया? कि कैसे दूर देश की राजकुमारी ने एक मेढक से शादी कर उसे राजकुमार बना दिया?

सीधे चमकती सूरज की किरणों से जगमगाती पीठ की सोनी कहीं वही राजकुमारी तो नहीं जो मेरे जैसे मेढक को अपने पीठ से छुआ किसी देश का राजकुमार बना देना चाहती है. चारों तरफ़ जैसे ख़्वाब के बादल तैरने लगे और उन कपास-से सफ़ेद बादलों के बीच सुनहरे पीठ की राजकुमारी सोनी.

वह ख़्वाब के पंखों संग धीरे-धीरे राजकुमारी की कहानियों में ख़ुद को ढूंढ़ने लगा. ढेर सारे अमरूदों से भरी डाल पर बैठा तोता बड़े स्वाद से अमरूद खा रहा था कि सोनी ने एक ज़ोर का ढेला फेंक तोते को उड़ा दिया. तोते के उड़ते ही वह अधपका-सा अमरूद भी सीधे टपक कर नीचे खड़े दीपेश के सर पर गिरा और फिर छन्न से अमरूद संग ही ज़मीन पर बिखर गये जागी आंखों के सारे सपने.

उसने देखा सोनी अपनी पीठ पर चुन्नी लपेट कर पेड़ पर चढ़ चुकी है.

'सुन, तुझे अमरूद पसंद है?'

'नहीं तो.'

ख़ुद ही चौंक गया दीपेश, उसे तो अमरूद बहुत ही पसंद है. फिर क्यों बोला नहीं पसंद है. क्या वह सोनी को देख धीरे-धीरे ख़ुद को भूलने लगा है?

सच में लगा, उसने तो आज तक अमरूद खाया ही नहीं है. उसने तो आज ही देखा है किसी और दुनिया का यह अजूबा-सा फल. जिस पर सुनहरी पीठ की कोई तितली फुदकती-सी उड़ रही है और उससे पूछ रही है बोलो राजकुमार, 'क्या अमृत फल चखोगे?'

'फिर का उन्हीं पत्तों से परमिशन ले रहे हो?' चारों ओर जैसे घंटियां बज उठीं.

'तुम कहती हो तो आज खा कर देखता हूं.'

सच सूखे पत्ते उसे किसी दोस्त से कम नही लगे.

'तो ले खा,' उसकी ओर एक अमरूद फेंक खिलखिला कर सोनी बोली.

'मेरे गांव के फल बहुत मीठे होते हैं, पास से ही जो गंगा मइया गुज़रती है ना.' हाथों को सर से लगा श्रद्धा से सर झुका लिया सोनी ने.

'सुना है जब पूरे चांद की आधी रात होती है और चांद पूरे ज़ोर से चमकता है तब गंगा मइया ढेर सारा अमृत इन पेड़ों पर छिड़क देती है. तभी तो इतने स्वादिष्ट होते हैं हमारे यहां के फल,' गर्व से इतराती हुई उसने कहा.

'सच ! तुमने देखा है?'

'धत, यह भी कोई देखता है?'

'पता है उस रात ढेरों परियां इन पेड़ों में झूले डाल गीत गाती हैं, परिंदों को आदमी बना उसके संग-संग नाचती हैं जो भी देखने जाता है उसे अपने पंखों में छुपा कर अपने साथ ही ले जाती हैं.' अपनी बड़ी-बड़ी आंखों को और भी बड़ा कर ज़मीन पर गिरे अमरूदों को चुनते हुए कहा.

दीपेश आश्चर्य से उसे देखता रहा. देखते-देखते भरी दोपहर की पीली धूप उसकी पीठ में समा कर नदी में बदल गयी. हिलोरें लेती इंद्रधनुषी नदी जिसकी बूंदें अमृत में बदल उसे पवित्र कर रही थीं. पीठ की नदी में तैरता उसका व्याकुल मन बस अब डूब ही जाना चाहता था कि सोनी एक अमरूद उठा कर उसे देती हुई बोली, 'काहे शरमा रहे हो, लो अब एक खा भी लो.'

पीठ की नदी फिर उसकी चुन्नी के नीचे छुप गयी. उसने महसूस किया चारों ओर सूखा छा गया है, रेत ही रेत फैल गयी है सब तरफ़, पूरी दुनिया की हरियाली ख़त्म हो गयी है.

'सुनो, तुम्हारा नाम क्या है?' अधीर हो पूछा दीपेश ने.

'सर पर अमरूद गिरने से पगला गये हो का? नाम पूछ रहे हो', 'आंखों को सिकोड़ती हुई चौंक गयी सोनी क्या, मैं सचमुच पागल हो गया हूं? मुझे यह क्या हो रहा है? क्या यह दोपहर में गांव के झाड़ों में रहने वाली वही लाल गोटे वाली चुड़ैल तो नहीं. सोचते ही कंपकपा गया वह. पर! यह तो सभी को दिखती है. मुझे तो दिन-रात दिखती है. नहीं यह कोई चुड़ैल-बुड़ैल नहीं है. लेकिन इसकी पीठ?

'अच्छा जाती हूं दोपहर के खाने का टैम ख़त्म हो गया. ठीकेदार नहीं देखेगा तो जम के दो-चार गाली संग पचास बात सुनाएगा.' ओठ को तिक्त भाव से मोड़ते हुए सोनी ने चुन्नी को चारों ओर से अच्छे से लपेट लिया. जैसे ठीकेदार सामने खड़ा उसकी चुन्नी का एक्सरे कर रहा हो.

'अच्छा, सुनो चली जाना पर पहले बताओ क्या तुम

सच में चाहती हो कि मैं तुम्हारी पीठ पर फागुन के गीत लिखूं.' उसने अपनी बेचैन आंखों से उसकी आंखों में झांकते हुए पूछा.

'हां तो और क्या?' उसने अपनी इठलाती चोटी को पीछे फेंकते हुए कहा.

चोटी के पीठ पर गिरते ही उसने पीठ पर बनते देखा एक लंबी काली सड़क जिस पर एक जोड़ा हाथों में हाथ डाले गा रहा था फागुन के गीत और उसके धुनों पर किनारों पर लगे पलाश गिरा रहे हैं सुर्ख लाल फूल. क्या यह सोनी और मैं हूं? हड़बड़ा कर उसने ज़ोर से आंखें मलते हुए पीठ की सड़क को देखा.

हां, यह तो मैं ही हूं, सुकून की लकीरें चेहरे पर फैलती हुई उसके दिल को गुदगुदा गयीं.

'एक बात कहूं.'

'हां, बोलो.'

'बुरा तो नहीं मानोगी.'

'क्या?' आंखें शरारत से पूछ बैठीं.

'अरे! नहीं,' झेंपते हुए आंखें शरमा कर झुक गयीं.

'अच्छा सुनो मुझे लिखना नहीं आता.'

शर्म और दुःख जैसे गालों पर ठहर लाल रंग में बदल गये.

'तो क्या हुआ? मुझे भी नहीं आता.' खिलखिलाहट से सोनी के लाल गाल कत्थई रंग में बदल गये.

'तुम्हीं ने तो कहा था कि तुम्हारी पीठ पर फागुन के गीत लिख दूं. काश! कि मुझे लिखना आता तो मैं....' आगे के शब्द मोटी-मोटी आंखों में आंसू बन तैरने लगे.

फिर धीरे से बोला पर, 'अगर तुम कहोगी तो मैं गा सकता हूं. फागुन के गीत, बरखा के गीत, प्रेम के गीत और....'

'अरे चुप भी करो, जान गयी गीतों के बादशाह हो.'

'तुमने मुझे बोलने क्यों नहीं दिया, मैं तुम्हें बताना चाहता था कि मुझे कितने गीत आते हैं.'

वो तो मैं तब जानूंगी ना जब तुम गा कर सुनाओगे.' सोनी ने लंबी सांसें लेते हुए कहा.

पर! मैं तभी सुनाऊंगा जब तुम मेरी तरफ़ पीठ करके बैठोगी.

'काहे...? आश्चर्य से भर उठी सोनी.

'बस यूं ही...' उसकी आतुर आंखों ने जबाब दिया.

'अच्छा गाने में शरम आ रही है,' छेड़ते हुए खिलखिला उठी सोनी.

चारों ओर जैसे नरगिस के फूल महक उठे.

'नहीं.'

'फिर.'

'जाओ, मैं नहीं गाता.'

'अच्छा चलो तेरी ओर पीठ कर लेती हूं,' कह पीठ कर बैठ गयी सोनी.

रहस्यमयी पीठ की भूल-भूलैया में खोता गया दीपेश फिर उसने गाये गीत... जाने कितने गीत. मौसम बदलते गये, वर्ष गुज़रते गये,जाने कितने अमरूद लगते रहे, कितने तोते आधे खाये अमरूद गिराते रहे. पर पीठ की नदी कभी नहीं सूखी. बहती रही और संग-संग बहते रहे वो दोनों.

पूनम चांद की आधी रात को नदी अपना अमृत छिड़कती रही दोनों पर. इसी तरह गुज़रते रहे बरसों-बरस.

अभी भी उस ख़ामोश जंगल में पीठ किये सोच रही है सोनी कि कब दीपेश गाना बंद करे और वह काम पर लौट जाये पर दीपेश गाता ही जा रहा फागुन के अनोखे से गीत ताकि सोनी ठीकेदार के डर से अपनी पीठ को फिर से चुन्नी से न ढंक ले. और इस तरह एक अव्यक्त, अनोखे प्रेम की अनलिखी कहानी गीतों संग बह रही है आज भी अमरूद के उसी अनदेखे जंगल में.

डी- २ , सेकेंड फ्लोर,
महाराणा अपार्टमेंट, पी. पी. कंपाउंड,
रांची–८३४००१ (झा. खं.).
ईमेल - satyaranchi732@gmail.com
मो- ७७१७७६५६९०

लघुकथाएं

मस्तिष्क से विकलांग

✍ डॉ. मृदुल शर्मा

नगर बस में विकलांग व्यक्तियों के लिए आरक्षित दो सीटों पर एक विकलांग और एक स्वस्थ व्यक्ति बैठे थे. बस पूरी भरी हुई थी.

एक बस स्टॉप पर एक विकलांग व्यक्ति बस में चढ़ा.

उसने स्वस्थ व्यक्ति से सीट छोड़ने का अनुरोध किया, किंतु वह सीट से न उठ कर ढिठाई से बोला – 'कुछ देर तो खड़े रह सकते हो, यार. मैं आगे उतर जाऊंगा, फिर जहां तक बस जाये, वहां तक आराम से बैठे रहना.' विवश विकलांग उसे टुकुर-टुकुर ताकता रह गया.

यह देख उसके पीछे वाली सीट पर बैठा एक वृद्ध अपनी सीट से उठते हुए बोला – 'आओ बेटा! तुम यहां बैठ जाओ. वास्तव में, यह भी विकलांग ही हैं. तुम शरीर से विकलांग हो और यह मस्तिष्क से विकलांग हैं.'

इतना सुनते ही वह ढीठ युवक क्रोध से चीख़ा – 'अबे बुड्ढे! तेरा दिमाग ...'

तभी पास खड़े एक बलिष्ठ युवक ने उसका कॉलर पकड़ कर खींच लिया और मारने के लिए मुक्का तानते हुए बोला – 'बदतमीज! एक तो विकलांग हेतु आरक्षित सीट नहीं छोड़ रहा है और उस पर बुजुर्ग व्यक्ति का अपमान कर रहा है.'

मगर तभी वृद्ध ने उस युवक को रोकते हुए कहा – 'न...न, मारना मत भइया. इसमें इसका दोष नहीं है. यह मस्तिष्क से विकलांग है न.'

वृद्ध की बात सुनकर बस में बैठे लोग हंस पड़े. अब उस ढीठ युवक का चेहरा देखने लायक था.

✆ ५६९/१०८/२, स्नेह नगर,
आलमबाग, लखनऊ- २२६००५

बिंदी

✍ डॉ. अनुराधा 'ओस'

चलती बस ब्रेकर के झटके से दहल रही थी. सुमि दुशाला ओढ़ कर बैठी थी पहचान के डर से, अचानक एक बूढ़ी औरत उसके बगल में कब आ कर बैठ गयी उसे पता ही न चला, अपनी ही उधेड़बुन में खोयी थी. कुछ लोग उसकी ओर ही ताक रहे थे.

'तुम बिंदी काहे नाही लगाई हो बिटिया',

वो कुछ न बोल पायी कि पति की ग़लत हरकतों से तंग आकर छोड़ दिया.

'बिंदी औरत का सुरक्षा कवच होतहउ बिटिया.'

वह आश्चर्य से मुंह फाड़े देखती रही उस वृद्धा को. उसे इस सुरक्षा कवच के बारे में आज पता चला.

✆ गांव व डाक -मोहनपुर भवरख,
जिला-मिर्ज़ापुर (उ. प्र.)
मो.९४५११८५१३६

'कथाबिंब' का यह अंक आपको कैसा लगा कृपया अपनी प्रतिक्रिया हमें भेजें और साथ ही लेखकों को भी. हमें आपके पत्रों/मेल का बेसब्री से इंतज़ार रहता है.

ई-मेल : kathabimb@gmail.com

- संपादक

पिंजड़ा

डॉ. पूरन सिंह

जन्म : १० जुलाई, १९६४ (मैनपुरी. उ. प्र.)
शिक्षा : एम. ए. (अंग्रेज़ी-हिंदी) 'सत्तरोत्तरी हिंदी कहानियों में नारी' विषय पर पी. एच. डी.

: कृतियां :
लगभग सभी छोटी, बड़ी और स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में कहानियां, लघुकथाएं, कविताएं, लेख आदि प्रकाशित.

: पुरस्कार/सम्मान :
विभिन्न प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्थाओं द्वारा अनेक सम्मान और पुरस्कार.

: प्रकाशन :
४ कहानी-संग्रह 'पथराई आंखों के सपने,' साजिश, मजबूर और रिश्ते तथा ६ लघुकथा संग्रह - महावर, वचन, सुराही, दिदिया, इंतज़ार, १०० लघुकथाओं का संग्रह तथा ६४ दलित लघुकथाएं एवं कविता संग्रह - विद्रोह प्रकाशित. कविता संग्रह-वृंदा तथा कहानी संग्रह १८ कहानीकार का संपादन.
एक कहानी संग्रह और एक लघुकथा संग्रह प्रकाशनाधीन. विभिन्न रचनाएं पुरष्कृत एवं आकाशवाणी से प्रसारण; १००० से अधिक लघुकथाएं, १८० से अधिक कहानियां और ३०० से अधिक कविताएं लिखी; उड़िया/मराठी/पंजाबी/बंगला/उर्दू/अंगज़ी आदि में विभिन्न रचनाओं का अनुवाद प्रकाशित.

: संप्रति :
भारत सरकार में प्रथम श्रेणी अधिकारी

चौधरी नरायन सिंह के पास लगभग पचास बीघा ज़मीन थी. दो बेटों और एक बेटी के पिता चौधरी नरायन सिंह बहुत ही सरल और सीधे तथा सज्जन थे. गांव का हर व्यक्ति उन्हें सम्मान देता था. उनका एक बेटा पुलिस में तथा दूसरा फ़ौज में था. बेटी अभी बारहवीं में पढ़ रही थी. बेटी का रंग रूप और लावण्य पूरे गांव में चर्चा का विषय था. पिता की लाडली बेटी माया अभी और भी आगे पढ़ता चाहती थी लेकिन चौधरी नरायन सिंह उसके हाथ पीले करके गंगा नहाना चाहते थे. और अपनी इसी चाहत को लेकर एक बार अपने बेटों, बहुओं और पत्नी सहित घर में बैठे थे तो बेटी से कहा था, 'बेटी मैं चाहता हूं तुम्हारी शादी कर दी जाए.'

चौधरी नरायन सिंह पुरानी विचारधारा के होने के साथ-साथ बेटियों को प्यार करने और उन्हें अधिकार देने में भी विश्वास रखते थे. उनके इस प्रश्न पर बेटी चुप रही. हालांकि चुप रहने का यह अर्थ यह कतई न था कि वह अपने पिता से सहमत थी लेकिन बेटी माया अपने पिता का बहुत सम्मान करती थी सो उनके समक्ष मुंह न खोल पायी जिसका अर्थ, पिता, मां, भाई और भाभियों ने उसकी सहमति मान लिया था, पिता को अपनी बेटी पर गर्व भी हुआ था. ख़ुशी भी हुई थी.

फिर क्या था. माया के लिए लड़का ढूंढ़ने का अभियान चल निकला और जब तक माया ने बारहवीं पास की उसके लिए वर की तलाश कर ली गयी थी.

निघौलीकलां गांव, कहने को तो गांव था लेकिन सुविधाएं लगभग शहर जैसी या क़स्बों जैसी ही थीं. बिजली, पानी सड़क, गाड़ी, मोटर से लेकर टेलिविज़न, फ्रिज़, वाई-फ़ाई तक लगभग सभी कुछ था यहां. इतना सब कुछ होने के बावजूद भी मान्यताएं, परंपराएं, रूढ़ियां और धार्मिक बातें सभी गांव की ही थीं और इसी गांव में रहते थे चौधरी सतवीर.

चौधरी सतवीर के पास नब्बे बीघा ज़मीन थी, ट्रैक्टर था, घर में मोटर साइकिल के अलावा, दो गाड़ियां थीं. दो बेटियों की शादी करने के बाद अभी एक बेटा शादी के लिए था. बेटा ख़ूब पढ़ा लिखा, सुंदर और सुघढ़ था. बेटा नौकरी करना चाहता था लेकिन चौधरी सतवीर का तर्क था कि अकेला बेटा है नौकरी कहीं दूर लगी तो... वह अपने बेटे को अपने से दूर नहीं करना चाहते थे. उनका एक तर्क और था कि जितना वह एक महीने में नौकरी से कमाएगा अगर अपनी खेतों पर दिन में एक चक्कर भी लगा लेगा तो उससे कहीं ज़्यादा कर लेगा. नहीं... नहीं... महेश नौकरी नहीं करेगा. बेटे ने पिता के आगे समर्पण कर दिया था. पिता के लिए बेटे के मन में बहुत श्रद्धा और सम्मान था. चौधरी सतवीर भी अपने बेटे पर गर्व करते थे. उन्हीं के बेटे से शादी तय हुई थी चौधरी नारायण सिंह की बेटी माया की.

दोनों ही पक्ष संपन्न थे. धन-धान्य की कमी न थी. मान-सम्मान में कोई किसी से कम न था फिर भी चौधरी नरायन सिंह ने अपनी बेटी की शादी में अपनी ओर से कोई कमी नहीं छोड़ी थी. बड़ी धूम-धाम से शादी हुई थी जिसकी चर्चा शादी के कई वर्षों तक पास–पड़ोस में होती रही थी.

माया दुल्हन बनकर अपने पति के घर निघौलीकलां आ गयी थी. पति-पत्नी में बेहद प्यार था. विश्वास था, अपनापन था.

एक दिन जब माया अपने मायके गयी तो उसके साथ ही पढ़ने वाली उसकी सहेली शारदा उससे मिलने आयी. शारदा उसी की कक्षा में पढ़ती थी. सुंदर थी और पढ़ने में माया से बीस ही थी. माया उसे बहुत चाहती भी थी. शारदा के पिता के पास बहुत ज़्यादा ज़मीन जायदाद न थी. लेकिन ऐसा भी न था कि वह निर्धन हों. खाना-पीना, ठीक चल रहा था लेकिन माया की तरह ख़ूब संपन्नता नहीं थी शारदा के घर. शारदा के पिता अच्छे किसान थे लेकिन चौधरी नरायन सिंह की तरह न थे. शायद इसीलिए अब तक अपनी बेटी माया की शादी किसी अच्छे घर में नहीं कर पाए थे. शारदा चाहती थी कि वह माया के गांव में ही ब्याही जाए. यही बात आज शारदा ने माया से बातों ही बातों में कह दी थी. माया तो चाहती ही थी कि शारदा उसकी सहेली है अगर उसी गांव में ब्याही जाती है जहां उसकी ससुराल है तो माया को बहुत ख़ुशी होगी. माया ने शारदा को आश्वासन दिया था कि अपने पति और ससुर से कहेगी. और जब वह अपनी ससुराल आयी तो अपने ससुर के सामने शारदा की शादी बात चलायी.

माया के ससुर ने अपने साथियों में बात रखी तो रास्ता निकल आया. शारदा के पिता की तरह ही सामान्य किसान का बेटा शादी के लिए देख लिया गया था. धरमवीर ख़ूब पढ़ा-लिखा था. पास के ही गांव में प्राइमरी में अध्यापक था. चौदह बीघा ज़मीन थी. दो भाई थे. गांव में ही पक्का घर था. छोटा भाई बी. ए. कर रहा था. कभी किसी के आगे हाथ फैलाने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी. गांव में ख़ूब मान-सम्मान था, इज़्ज़त थी. चौधरी सतवीर के मकान से दो घर छोड़कर घर था. धरमवीर के उनके साथ पारिवारिक संबंध थे. आपसी प्रेम और अपनत्व था दोनों परिवारों में. चौधरी सतवीर ने ही मझियागीरी की थी अर्थात दोनों परिवारों को मिलाया था.

शारदा और धरमवीर की शादी बहुत ही साधारण तरीक़े से हुई थी. दोनों पक्ष ख़ुश थे और इन सभी के साथ-साथ जो सबसे ज़्यादा ख़ुश थी, वह थी माया. माया इसलिए ज़्यादा ख़ुश थी कि आज उसके गांव की, उसके साथ पढ़ी, पली, बढ़ी उसकी सहेली शारदा अब उसी के गांव में ब्याही गयी और इतना ही नहीं उसकी पड़ोसिन भी बनी और रिश्तों की बुनावट में देखें तो देवरानी भी हुई. उसकी ख़ुशी का कोई पारावार नहीं था.

सब कुछ ठीक चल रहा था. दोनों परिवार ख़ुश थे. दोनों परिवारों का पास में आना-जाना था. उठना-बैठना था

समय उड़ रहा था.

देखते-देखते, माया और शारदा एक-एक बच्चे की मां बन गयीं. शारदा, माया के पति को जीजा कहती थी. गांव के रिश्ते से देखा जाय तो वह शारदा का जेठ होना चाहिए था लेकिन वह तो जीजा ही कहती थी और इसी रिश्ते से उनमें हंसी-मज़ाक भी होती रहती थी. माया को इन बातों से कोई लेना देना नहीं था. माया तुलनात्मक रूप से शारदा से सुंदरता में कम थी. शारदा की सुंदरता, माया के पति महेश को दीवाना बना रही थी जबकि शारदा के मन में ऐसा कुछ भी न था. महेश मज़ाक–मज़ाक में शारदा से कई बार कह भी चुका था, 'अगर तुम, मुझे पहले मिली होती तो माया से शादी नहीं करता.'

माया और शारदा इसे हमेशा मजाक में ही लेतीं लेकिन महेश अंदर ही अंदर सुलगता रहता. शारदा कितनी

ही बार माया की अनुपस्थिति में भी उसके घर चली जाती और जीजा-साली बातें करते रहते.

तभी, एक दिन ....

माया अपने मायके गयी हुई थी. शायद उसके पिता की तबियत ठीक नहीं थी. महेश घर पर अकेला था. शारदा उसके घर चली गयी और सीधी महेश के कमरे में ही घुस गयी उसे पता नहीं था कि माया घर पर नहीं है. और वैसे भी रिश्ता तो सहज था ही. जब उसे पता चला कि माया घर पर नहीं है तो वह लौटने लगी तो महेश ने कहा था, 'जीजी से ही रिश्ता है जीजा से तो कोई मतलब ही नहीं है. हम तो कोई हैं ही नहीं.'

'नहीं आप मेरे लिए माया से ज़्यादा हैं' कहकर, वहीं महेश के पास ही बेड पर बैठ गयी थी.

महेश कुछ देर तो माया और अपने ससुर की बातें करता रहा फिर न जाने उसे क्या हुआ कि उसने शारदा को अपनी बाहों में भर लिया.

'ये क्या कर रहे हैं जीजा!' शारदा ने अपने आपको छुड़ाने की कोशिश की.

'बस एक बार शारदा... शारदा तुम मुझे बहुत अच्छी लगती हो.' कहता हुआ महेश मनमानी करने की कोशिश करने लगा.

शारदा ने जान लिया था कि महेश के मन में क्या है.

बस फिर क्या था शारदा जितना अपना बचाव करती, महेश उतना और शक्तिशाली होता जाता. और स्थिति यहां तक आयी कि महेश माना ही तब, जब उसने मनमानी कर ली.

शारदा ने अपने आपको संभाला. संयम रखा और अपने घर लौट आयी. घर आकर उसने एक-एक बात अपने परिवार को बतायी. दूसरे दिन तक बात फैलते-फैलते चौधरी सतवीर से होती हुई शारदा के मायके और मायके में माया तक पहुंच गयी थी. माया दौड़ती-हांफती मायके से ससुराल पहुंची.

ठीक दो दिन बाद गांव में पंचायत बैठ गयी. पंचायत घर बीचो-बीच गांव में था. पंचायत बिल्कुल खुली जगह में बैठी थी. पूरा गांव इकट्ठा था. चारों तरफ पुरुष ही पुरुष दिखाई दे रहे थे. जिनमें शारदा और माया के मायके और ससुराल के परिजनों के अलावा, पांच गांवों के इज्जतदार, दबंग, ताकतवर, धनी, रुतबेदार, पंच, सरपंच और छुटभैये नेता टाइप लोग थे तो नयी उम्र के लड़के भी थे. गांव की महिलाएं अपने घरों की छतों से देख रही थीं. कुछ अपने किवाड़ों से झांक रही थीं.

कुछ ही देर में पंचायत शुरू हो गयी. लंबे-लंबे साफे और नुकीली मूछोंवाले, हुक्का गुड़गुड़ाते, कब्र में पैर लटकाए बुज़ुर्गों में से पांच लोग, पंचों की गद्दी पर बैठे थे, शेष लोग उनके नीचे बैठे थे. पंचायत में महेश अपराधी था और शारदा की गुहार थी.

सारी बात सभी को पता थीं फिर भी सभी के सामने दोनों पक्षों अर्थात महेश और शारदा की बातें सुनी गयीं. महेश ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया था इसलिए जिरह या बहस की तो बात ही नहीं थी. पंचों को निर्णय लेने में सुविधा हुई.

थोड़ी देर पंच बातें करते रहे आपस में फिर निर्णय सुनाया गया, 'क्योंकि महेश ने अपनी ग़लती मान ली है. इसलिए पंचायत इस निर्णय पर पहुंची है कि जिस तरह से महेश ने शारदा के साथ जो काम किया है, अर्थात बलात्कार किया है. शारदा का पति अर्थात् धरमवीर, महेश की पत्नी माया के साथ मनमानी कर सकता है.'

पंचों की दृष्टि में यह एक ऐतिहासिक फैसला था और न्यायसंगत भी. ठीक उसी तके पर आंख के बदले आंख और कान के बदले कान.

महेश को कोई आपत्ति नहीं हुई थी. धरमवीर शांत बैठा था कि तभी शारदा बोली थी,

'...और फिर माया पंचायत इकट्ठी करेगी. तब कौन-सा निर्णय होगा. माया तो अपराधी नहीं होगी. अपराधी मेरा पति भी नहीं होगा फिर कैसे न्याय करोगे. क्या तब फिर मुझे महेश के नीचे से गुज़रना पड़ेगा.'

पंचों ने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि कोई औरत भरी पंचायत में बोलेगी. औरतों को तो गूंगा रखने की साजिश युगों-युगों से चली आ रही है और सफलता भी मिली है. फिर ये शारदाएं कहां से पैदा हो गयीं?

पंचायत में सांय-सांय बोलने लगी. लगा दिन में ही रात हो गयी हो. शारदा सीना तानकर अपने प्रश्न का उत्तर चाह रही थी.

पंचायत में अचानक कानाफूसी शुरू हो गयी थी. कोई कह रहा था कि महेश और उसके परिवार का सामाजिक बहिष्कार कर दिया जाए अर्थात उनका हुक्का पानी बंद कर दिया जाए. कोई कह रहा था गांव से निकाल दिया जाए. तो कोई कह रहा था — नहीं नहीं उसे पुलिस के हवाले कर

दिया जाए. लेकिन सभी की सहमति पहले वाले निर्णय पर थी, बलात्कार के बदले बलात्कार और अगर यह निर्णय था तो शारदा का प्रश्न भी उत्तर चाह रहा था.

पंच अभी उधेड़बुन में लगे थे और सोच रहे थे कि उन्होंने कितना सही निर्णय सुनाया लेकिन ये औरत सब गू का लीपन किये दे रही है कि तभी माया भी पंचायत में आ गयी थी. उसकी आंखें जल रही थीं. पंचों ने माया को देखा तो आग ही आग बरसने लगी थी दसों-दिशाओं में.

गांव के इतिहास में यह पहली बार था कि औरतें पंचायत में आयी हों. औरतें आयी तो थीं पहले भी लेकिन या तो अपराधी की तरह या फिर फरियादी की तरह लेकिन ये दोनों — ये तो निर्णय ही पलटना चाहती थीं. निर्णय पलटना मतलब पुरुष सत्ता को चुनौती देना. पुरुष को ललकारना. सदैव स्त्रियों को अपने मकड़जाल में, अपने चक्रव्यूह में फंसाने वाले पुरुष आज ख़ुद फंसते नज़र आ रहे थे. कि तभी माया बोली थी, 'मैं इस फ़ैसले को नहीं मानती. अपराधी मेरा पति है तो मैं क्यों सज़ा भुगतूं. अगर मेरी सहेली का पति मेरे साथ मनमानी करेगा तो इससे पहले मैं जान दे दूंगी. तब तो न्याय अधूरा ही रह जाएगा.'

अभी तक पंच शारदा के सवाल का जवाब नहीं खोज पा रहे थे कि माया का प्रश्न तीर-सा उन्हें भेद रहा था.

दोनों सहेलियां साथ-साथ खड़ी थीं. दोनों निर्दोष थीं कि अचानक भरी आंखों से शारदा ने माया से कहा था, 'बहन अब तू ही बता क्या किया जाए. अगर पंचों की बात मान लेते हैं तो तुझ पर गाज गिरेगी और नहीं मानते हैं तो मेरे साथ अन्याय होगा. दोनों ही स्थितियों में मरना हमें-तुम्हें ही होगा. ये इन पुरुषों का चक्रव्यूह है. बता कैसे करें. अब तू ही न्याय कर.'

शारदा की बात सुनकर पंचों की मूछों में आग लग गयी. साफे हवा में लहराने लगे. गुड़गुड़ करते हुक्कों से विष उगलने लगा और मजे की बात तो तब हुई जब अपनी अपनी छतों से निर्णय सुनने को बेताब महिलाएं छतों को छोड़कर पंचायत में इकट्ठी हो गयीं और जो किवाड़ों की आड़ में थीं, वहां से निकलकर वे भी पंचायत में आ गयीं.

पंच खिसिया गये और पंचायत छोड़कर यह कहते हुए कि अब लुगाइयां पंचायत करेंगी तो मर्द क्या चूड़ियां पहनकर सेज सजाएंगे, वहां से चलने लगे थे.

देखते ही देखते माया पंचों वाले स्थान पर जाकर बैठ गयी. आश्चर्य की बात यह थी कि जो पंच चलने लगे थे, रुक गये थे. और यह कहते हुए 'देखें महीने दर महीने कपड़े बदलने वाली भी अब पंचायतें करेंगी... देखें क्या करती हैं.'

माया ने तेज़ आवाज़ में निर्णय सुनाया, '...मेरा पति शारदा का अपराधी है. उसे पुलिस को सौंप देना चाहिए लेकिन वह ताकतवर है. धनवान है, रसूखवाला है. इसलिए जुगाड़-तिगाड़ लगाकर वह बच जाएगा. चाहती तो मैं यह हूं कि वह भरी पंचायत में, शारदा के पैरों में नाक रगड़े. माफ़ी मांगे. इतना ही नहीं वह गांव की एक-एक औरत के आगे कहे कि मैं स्त्री जाति का अपराधी हूं. मुझे माफ कर दो. फिर वह एक साल के लिए गांव छोड़कर चला जाए. उसका हुक्का पानी बंद कर दिया जाए.' वह थोड़ी देर रुकी थी. सांसें इकट्ठी की थीं फिर बोली, '...वह ऐसा करेगा नहीं लेकिन मैं भरी पंचायत में निर्णय लेती हूं कि आज से महेश मेरा पति नहीं है. मैं उसे त्यागती हूं. मैं अपने बच्चे को लेकर यह गांव छोड़कर चली जाऊंगी. यह तो मेरे वश में है.'

फिर वह पंचों वाले स्थान से उतर आयी थी. पंचों ने निर्णय सुन लिया था. कभी सपने में भी नहीं सोचा होगा कि स्त्री भी पंच बनकर न्याय करेगी. चारों ओर शांति थी. सिर्फ़ चिड़ियों की चहचहाट ही सुनाई दे रही थी कि भागकर शारदा अपनी सहेली माया के पास आ गयी थी. दोनों गले लगकर रो रही थीं कि माया बोली थी, 'हो सकता है शारदा मैं न्याय न कर पायी होऊं लेकिन आज मैंने इन पुरुषों की बनायी हुई दीवार ढा दी है. एक पिंजड़ा जो इन्होंने स्त्री जाति के लिए बुना था मैंने उसका रेशा-रेशा बिखेर दिया है. ये...ये पुरुष अपने-अपने मन से निर्णय सुनाते रहे और अपने पक्ष में लेते रहे हैं. मैंने कोशिश की है और तुमसे सिर्फ़ इतना ही कहती हूं कि तुम मेरे पति अर्थात महेश को कभी माफ़ मत करना. चलती हूं.' कहकर माया अपने बच्चे को लेकर चली गयी थी.

शारदा उसे जाते हुए अब भी देख रही थी कि पीछे से उसके कंधे पर किसी ने हाथ रखा था.

उसने पलटकर देखा. धरमवीर था. इसके पहले कि वह कुछ कहती धरमवीर बोला था 'चलो, घर चलें.'

२४०, बाबा फरीदपुरी,
वेस्ट पटेल नगर,
नयी दिल्ली- ११०००८
मो : ९८६८८४६३८८

मुझे वापस लौटना है

✍ गरिमा संजय दुबे

गत ८ वर्षों से लेखन में सक्रिय, कई कहानियां, व्यंग्य, कविताएं व लघुकथा, समसामयिक लेख, ललित निबंध, समीक्षा, नई दुनिया, जागरण पत्रिका, हरिभूमि, दैनिक भास्कर, फेमिना, अहा ज़िन्दगी, विभोम स्वर, शब्द प्रवाह, वीणा, समावर्तन, शिवना साहित्यिकी, स्वदेश, प्रजातंत्र, अमर उजाला, नवनीत, प्रभात खबर, प्रतिलिपि, वाङ्मय, क्षितिज, विश्व लघुकथा कोश, मातृभारती, इंद्रदर्शन में प्रकाशित. कुशल मंच संचालक, वक्ता. आकाशवाणी से कहानियों का प्रसारण. एक कहानी संग्रह 'दो ध्रुवों के बीच की आस' २०१९ में प्रकाशित; 'द नॉवल एज़ हिस्ट्री: पपोस्ट १९८० नॉवल्स ऑफ नयनतारा सहगल' विषय पर अंग्रेज़ी साहित्य में शोध उपाधि. 'अरिस्टोटल अ क्रिटिक' विषय पर लघु शोध ग्रंथ.

: पुरस्कार व सम्मान :

प्रमोद शिरधोनकर स्मृति सम्मान, उज्जैन २०१९, कहानी संग्रह 'दो ध्रुवों के बीच की आस' अंतर्राष्ट्रीय शिवना कृति सम्मान २०१९, पवैया स्मृति साहित्य कला रत्न सम्मान २०१८-१९, सर्व भाषा ट्रस्ट नयी दिल्ली द्वारा सूर्यकांत त्रिपाठी निराला सम्मान २०१९; अखिल भारतीय कुमुद टिक्कू कहानी प्रतियोगिता २०१९ में प्रथम स्थान; पद्मश्री मालती जोशी जी द्वारा वामा साहित्य मंच, इंदौर में सम्मानित, क्षितिज संस्था इंदौर द्वारा सम्मानित, नारी शक्ति सम्मान.

तीन महीने में घर का माहौल बदल गया है, जब वह आया था तो बच्चे... नहीं बच्चे तो अब बड़े हो गये... बीबी... बीबी अब छुई-मुई नहीं रही.

लेकिन अपनी मेहनत से... सरकार से थोड़ा कर्ज़ा ले.. उसने अपना टिफ़िन सेंटर डाल लिया था.

पत्नी के हाथ का स्वाद उसने याद करने की कोशिश की, दस साल में इंसान बहुत कुछ खो देता है. अपना रंग रूप, चाल-ढाल, स्वाद पसंद.. और जिस जगह वह रह रहा था वहां से कुछ भी साबुत बाहर कैसे आयेगा... वहां से तो बहुत–सी कहानियां बाहर आती हैं.

हां, तो उसने याद करने की कोशिश की, उसकी हाथ की बनी रसोई की सब बहुत तारीफ़ करते थे. उसके पिताजी तो कहते थे कि, 'स्वाद तो हाथ में और मन में रहता है, जिस भाव से बनाओ भोजन वैसा ही बनता है, बहू तो खाली जीरे का छौंक भी दे दे तो तरकारी स्वादिष्ट बनती है.'

सच कहते थे जरा से तेल में हींग जीरे का छौंक दे बनी अरहर की दाल भी ऐसी लगती थी उसके हाथ की जैसे कोई पकवान हो.

अब भी वह वैसा ही खाना बनाती है, लेकिन जब से लौटा था पहला दिन तो बहुत भारी बीता.

सबके जीवन के धड़े बदल गये थे... वह एक अवांछित तत्व की तरह आ कर उनके जीवन में शामिल हो गया था. इन दस सालों में सबको उसके बिना जीने की आदत हो गयी थी.

उसकी पत्नी माला सोच रही थी, 'कैसी अजीब बात है जिस पति के घर आने के इंतज़ार में गिन-गिन कर दिन निकाले आज उसके आ जाने से यह असहजता क्यों? मन की कशमकश, उलझन, बेबसी, ख़ुशी मनाएं कि घबराहट चिंता छुपाये समझ नहीं पा रही थी. एक साथ

बहुत सारे भाव मन में उमड़-घुमड़ रहे थे, और वो कभी एक को संभालती, कभी दूसरे को, लेकिन भाव थे कि किसी न किसी कोने से चुगली कर ही देते. हाथ कांप रहे थे, चीज़ें हाथ से छूट भी रही थीं, लग रहा था कोई कोना मिल जाए अकेले तो जरा संभाल ले, अपनी ख़ुशी भी, चिंता घबराहट भी.

बच्चे भी हैरान, दरवाज़े के पीछे से अपने पिता को देखते, कुछ कुछ सकुचाते हुए आये और प्रणाम करके, फिर भीतर के कमरे में, जैसे किसी अजनबी को देख रहे हों, उसने भी एक नज़र डाली बेटे-बेटी पर, जब गया था तब बेटा दस साल का था बेटी सात साल की, अब बेटा बीस साल का है और बेटी सत्रह की.

'दोनों कॉलेज़ में हैं, और पार्ट टाइम जॉब भी करते हैं. रश्मि, बेटी एक जगह एकॉउंट का काम संभालती है और बेटा एक कंपनी में रात की पाली करता है,' माला ने बात की शुरुआत कर बोझिल माहौल को हल्का करने की कोशिश की.

उसने भी एक फीकी हंसी हंस कर कहा, 'अरे वाह, यह दोनों तो बहुत समझदार हैं.'

मन किया बेटे को पास बैठा कर पीठ पर धौल जमा बाहों में भींच लें, बेटी को गले से लगा कर रो ले, लेकिन कर न सका, सबके सब इस लम्हे को एक साल बाद घटने, देखने के लिए तैयार थे, अचानक से उसके सामने आने पर किसी को समझ नहीं आ रहा था कि कैसे प्रतिक्रिया दें. ऐसी अस्वाभाविक स्थिति को स्त्रियां ही संभालती हैं. माला लगातार बोलती जा रही थी.

'दिन रात बात करते हैं बच्चे तुम्हारे बारे में, बाबा जब आयेंगे तो यह करेंगे, वह करेंगे, यहां जाना है, वहां जाना है रश्मि ने तो बक़ायदा एक डायरी भी बना रखी है, क्या क्या करना है, कहती है एक-एक कर बदला लूंगी इतने सालों का', बोलते-बोलते उसकी आंखों से दो बूंद टपक पड़ीं. हंसी और आंसू के मिश्रण ने आवाज़ कुछ नम कर दी थी, फिर भी बोलती रही, 'मुन्ना तो बाबा बाबा की रट ही लगाता रहा है, सबके साथ उनके पापा को देख तुम्हें यादकर रोता रहा है.' अब आंख के आंसू नाक की सुड़की बन गये थे, आंचल से अपनी नाक आंख पोंछती वह बोलती रही, 'और मैं... कहते कहते रुक गयी...' उसकी तरफ़ देखा... वह सिर नीचा किये सुन रहा था, आंख से आंसू उसके भी टपक पड़े थे और नाक का स्वर भी ज़ारी था.

'और मैं दो बच्चों के साथ दुनिया में अकेली,' फिर याद आते ही झेंप गयी, 'लो आते ही रोना शुरू, चाय-पानी भी न पूछा.' झटपट, चाय चढ़ाई और मुन्नी को आवाज़ लगायी, 'रेशु, बा... बा, बड़ी मुश्किल से उसके मुंह से निकला, 'बाबा को पानी तो दे, चाय पी लें फिर नहाने का पानी दे देना.'

पति ने झुके हुए सिर को उठाया, अचानक लगा दस साल पहले की मुन्नी दौड़ती हुई बाबा, बाबा कहती हुई, आयेगी और उसके पैरों से लिपट जायेगी, वह उसे हवा में उछाल कर बाहों में थाम लेगा और फिर गले में हाथ डाल वह फरमाइश करती रहेगी, लेकिन...

धीमे क़दमों से अजनबी की तरह वह आयी और पानी दे कर वापस अपने कमरे में चली गयी. वह उसे जाते हुए देखता रहा. पुश्तैनी मकान वही है, सब कुछ वही है लेकिन जैसे हवाओं में बदलाव आ गया है, आसपास का पूरा मोहल्ला वही है लेकिन लोगों की नज़रों में बदलाव आ गया है.

पानी का ग्लास हाथ में ले वह खिड़की के पास खड़ा हो गया. दस वर्ष में तो घूरे के दिन फिर जाते हैं, लेकिन उसके दिन तो उल्टे फिरे हैं, घर के आसपास जो खुली जगह हुआ करती थी अब वहां बाज़ार ने डेरा डाल लिया है, उल्टे-सीधे बने निर्माण, छोटी-छोटी सी दुकानें, संकरी गलियां, पहले उसका घर मुख्य सड़क से दिखता था, अब बहुत–सी गलियों में चक्कर काट कर पहुंचना पड़ता है. उसे लगा उसके घर के और उसके जीवन दोनों के रास्ते ऐसी ही भूल–भुलैया जैसे हो गये हैं. इस घर तक पहुंचने में जितने चक्कर काटे हैं, सबके जीवन और अपने ख़ुद के जीवन से जुड़ने में उसे उतने ही चक्कर काटने पड़ेंगे. कोने पर लगने वाली पान की दुकान और पीपल के नीचे खटिया डाल ताश बीड़ी करते मोहल्ले के बुज़ुर्ग अभी नहीं दिख रहे, सब घर में बंद हैं जब वह आया था तो सबने उसे अजनबी निग़ाह से देखा. कुछ की आंखों में परिचय की चमक दिखी तो उसने अपना हाथ हिला दिया. उधर से बड़ा हल्का हाथ उठा, उसने अचकचा कर अपना हाथ नीचे कर लिया और घर में दाख़िल हुआ.

पत्नी ने चाय हाथ में पकड़ाते हुए कहा, 'बिन्नो,

बिन्नो याद है ना, उसकी शादी हो गयी एक बच्ची भी है, और मोहित का बच्चा तो दसवीं में आ गया.'

बिन्नो और मोहित, बहन के बच्चे, इतने बड़े हो गये.

उसने बुझी हुई आवाज़ में कहा, 'हां, तुम जब आती थीं मिलने तब बताया था ना.'

'और राधु काका-काकी, वही गांव वाले स्वर्ग सिधार गये, अपनी पूरी ज़मीन पैसा समाज को दान कर दी, हम नहीं दिखे कि थोड़ा हमें दे देते तो आसरा हो जाता, गांव की ज़मीन हमने भी बटाई पे दे दी, न हम वहां जा सकते थे न ज़मीन यहां आ सकती थी.'

पत्नी वही सारी बात कर रही थी जो उसे मिलने आने पर बताती थी, इसी से कुछ सिरे जुड़ें यह सोच कर.

हाथ में चाय लिये वह फ़ैक्टरी के गेट की तरफ़ देखता रहा, पत्नी ने दूर दराज़ के सब रिश्तेदारों की ख़बर दे दी, 'किसी ने कोई मदद नहीं की, सब अपने ही हाल में बेहाल हमें क्या देते, हमने भी ठान ली किसी के आगे हाथ नहीं फैलायेंगे, वो तो अपने गहने काम आये और यह टिफ़िन सेंटर चल निकला,'पत्नी अपनी संघर्ष गाथा कह रही थी.

उसके संघर्ष से अंजान नहीं है वह, लेकिन उसका अपना संघर्ष, क्या वह संघर्ष नहीं था, दस वर्ष अपने परिवार से इस कदर दूर.

चाय धीरे-धीरे ख़त्म कर वह बोला, 'यहां पास में पुरोहित जी और माहेश्वरी जी रहते थे ना, वो लोग..'

उसकी बात पूरी होने से पहले वह बोल पड़ी, 'बड़े लोग हो गये, महंगी कॉलोनी में चले गये...'

पत्नी बोल-बोल कर घर में पसरे सन्नाटे की चादर को खींचने की कोशिश कर रही थी, लेकिन जैसे उस चादर को किसी ने मज़बूती से तान दिया था जो हटने का नाम नहीं ले रही थी.

जिनके घर टिफिन जा रहा था, वे बच्चे कमरे हॉस्टल खाली कर जा चुके थे, बेटा बेटी दोनों का काम भी आधी तनख़्वाह पर चल रहा था, उसके ख़ुद के लिए सरकार ने जो व्यवस्था की थी या ख़र्च वहां आता था, वो यहीं भिजवाने की व्यवस्था की थी, साथ ही सिलाई में उसके हाथ जमे हुए थे तो इतने सालों में जो भी सिलाई की उसका पैसा भी उसे मिल गया था, एकदम निकम्मा नहीं था वह.

पत्नी रात के खाने का इंतज़ाम कर रही थी, सब्ज़ी तरकारी की कमी चल रही थी इन दिनों तो दाल और हरी मिर्ची का बेसन बना लिया था उसकी बीबी ने.

खाना तैयार होते ही आवाज़ लगायी, 'चल गुड़िया पानी भर, बिट्टो थाली ले कर खाना नीचे रख आसन बिछा.'

दोनों बच्चे चुपचाप आकर अपना काम करने लगे, 'अरे टीवी तो लगा, रोज़ तो सामने बैठ कर सब खाना खाते हैं, आज भी खायेंगे,' वह बोली.

लड़का बोल पड़ा, 'लेकिन आज...'

'लेकिन आज', उसके कान में हथौड़े-सा पड़ा, वह चुपचाप बैठा रहा.

पत्नी ने ही बात संभाल ली, 'क्यों आज क्या बदल गया है, कुछ नहीं चलो सब बैठो मेरी रोटी भी उतर गयी है, मैं भी आ रही.'

लड़की ने थाली परोसी और धीरे से बोली,'बा.. बा, चलो.'

उसके कान में जैसे प्यार उडेल दिया किसी ने, मन जाने क्यों रोने-रोने को हो आया, 'आं हां, हाथ धोकर आता हूं', कह वह बाथरूम में घुस गया. तीनों उसकी ओर देखते रहे, नमी सबकी आंखों में थी, वे सब दस बरस पहले जैसे दौड़ कर एक दूसरे से लिपट जाना चाहते थे लेकिन क्या था जो उन्हें रोक रहा था, सब एक दूसरे से नज़र क्यों चुरा रहे थे.

सबने टीवी देखते हुए खाना खाया, चुप्पी असहनीय हो रही थी, टीवी पर कोरोना अपडेट बताया जा रहा था, पत्नी अकेली मोर्चा ले बोले जा रही थी.

'ले बेटा मेथी की दाल तेरी पसंद की है,'

'गुड़िया अचार ले ले,'

'और तुम क्या धीरे-धीरे खा रहे हो, लो इतने दिनों बाद आज अचानक आये तो क्या मेरे हाथ का स्वाद भी भूल गये, कल नगर निगम से सब्ज़ियां मंगवा ली हैं, थोड़ी परेशानी हो रही है, ना जाने कैसी बीमारी आयी है यह, न जीने दे रही न मरने दे रही,'

घनी चुप्पी भी असहज होती है और अनावश्यक बोल बोल भी, सब समझ रहे थे लेकिन मज़बूर थे.

खाना निपटा, काम निपटा, पत्नी ने बच्ची से कहा, 'तू भैया के कमरे में सो जाना.'

वह एक दम चौंक गया कितनी आसानी से बच्चों के

सामने ऐसा बोल गयी वह, वह झिझक से गड़ गया, 'क्या सोचेंगे बच्चे'.

बेटी ने अपना तकिया चादर उठाया और तुनक-तुनक कर भाई के कमरे में चली गयी, बेटा भी उसे देखने लगा.

बड़ी मुश्किल से गला खकार कर बोला,'अरे रहने दो मैं यहीं बैठक में गादी डाल सो रहूंगा', बोलते-बोलते पत्नी की नज़र से नज़र मिल गयी, जाने कैसा कातर भाव था, जाने कैसा अनुरोध, क्या प्रणय अनुरोध नहीं नहीं, कुछ और था.

वह संयत होते हुए बोली, 'इतने साल बाद आये हो, जाने कितनी बातें करनी हैं तुमसे, क्या तुम्हें नहीं करनी मुझसे कुछ बात.'

'नहीं नहीं ऐसा नहीं है,' वह हकलाया.

'तो मुन्नी तो अक्सर ही भाई के कमरे में सोती है, दोनों देर रात तक काम करते हैं,' पत्नी ने सहजता से कहा.

वह बैठे-बैठे टीवी देखता रहा, पत्नी ने काम निपटाया और बोली, 'अब, सो जाओ.'

'अभी आता हूं, तुम चलो,' उसने टीवी बंद करते हुए कहा.

बाहर अंधेरा घना हो गया था, भीतर उससे भी घना, वह पसीने-पसीने हो रहा था, पैर उसी कमरे की ओर जाने के लिए नहीं उठ रहे थे जो कभी उसका था, आख़िर हिम्मत की, बच्चों के कमरे की ओर देखा, अपराध–बोध हुआ, बच्ची से उसकी मां का सिरहाना छीनने का बोध हुआ.

कमरे में जाते नहीं बन रहा, इतना नर्वस तो वह शादी के बाद पहली बार कमरे में दाख़िल होते हुए भी नहीं हुआ, लेकिन अब धीरे से उठा, पानी पीया और हिम्मत कड़ी करके कमरे में दाख़िल हुआ, अंदर बदलाव हुआ था, अलमारी और पलंग नये थे, पत्नी ने चादर बिछाते हुए कहा, 'बच्चे अपनी पहली तनख़्वाह पर ले आये थे, किश्तों में, बिटिया को बड़ा शौक़ है घर को सजा-धजा के रखने का, मां-बापू ने अच्छा किया था जो यह मकान बना दिया, नहीं तो उसके जाने के बाद हम तीनों पता नहीं कैसे संभालते.'

उसने तो जीवन भर सिवा आवारागर्दी के कुछ किया नहीं, अच्छा हुआ जो उसके जाने के पहले ही स्वर्ग सिधार गये, इस मकान के ऊपर के हिस्से में किरायेदार भी रहते हैं, उसने मन ही मन हिसाब लगाया, किराया देना नहीं पड़ता, किराया आता है,पत्नी टिफ़िन सेंटर चलाती है, पैसे टके की ज़्यादा परेशानी नहीं हुई होगी, उसने संतोष की सांस ली. अब तो बच्चे भी बड़े हो गये और कमा रहे हैं, अपना ख़र्चा तो निकाल ही लेते हैं अचानक उसे अपना होना बेमानी-सा लगा, मेरे न होने से भी इन लोगों को कोई परेशानी नहीं आयी, अपने आपको उसने बड़ा अनुपयोगी पाया, हर इंसान की चाहत होती है कि उसकी अनुपस्थिति महसूस हो, उसके न होने को लोग याद करें, लेकिन लगता है जैसे इन सबने मेरी अनुपस्थिति को महसूस ही नहीं किया, इसलिए मेरी उपस्थिति का भी कोई मोल नहीं, वह रुआंसा-सा हो गया. पत्नी ने कहा, 'खड़े क्यों हो तुम्हारा ही घर है, आओ बैठो,' कहकर वह एक कोने पर बैठ गयी, वह भी एक कोने पर पलंग का हत्था पकड़ कर बैठ गया.

'कैसी हो, कैसे गुज़रे इतने साल मेरे बिना,' वह भर्राई हुई आवाज़ में बोला.

'जैसे तुमने गुज़ारे मेरे बिना,' पास आकर पत्नी ने उसके कंधे पर हाथ रख दिया, बहुत देर से रोका हुआ आंसुओं का बांध टूट गया, बहुत देर का नहीं बरसों का बांध आज टूट गया, दोनों फूट-फूट कर रो दिये, बहुत देर तक रोते रहे दोनों, सिसकियां, हिचकियां बंध गयीं. उठकर पत्नी ने पीठ पर हाथ फेरते हुए पानी पिलाया ख़ुद भी पिया, चेहरे पर पानी के छींटे मारे, दोनों पलंग के हत्थे पर सिर टिकाए चुपचाप छत की तरफ़ देखते रहे.

केवल वो ही नहीं ताक रहे थे छत की तरफ़, दूसरे कमरे में दोनों बच्चे भी आसमान ताक रहे थे, चार जोड़ी आंखों में आज नींद नहीं थी. बेटी ने कमरे में आते ही तकिया फेंक दिया था और मुंह ढांपे रो पड़ी थी. बेटे ने उसे पुचकारा था,'क्या हुआ रोती क्यों है पगली.'

'भइया वो बाबा मां के कमरे में क्यों गये,' सिसकते हुए वह बोली.

भाई मुस्कुरा दिया, 'बाबा हैं ना हमारे, उस कमरे में नहीं जाएंगे तो कहां जाएंगे, इधर आ,' उसे प्यार से अपने पास बैठा, वह खिड़की के पास बैठ गया, 'तू तो बहुत छोटी थी क्या तुझे कुछ भी याद नहीं, हम चारों तो साथ में सोते थे उस कमरे में, और तुझे पता है तू तो बाबा से लिपट कर ही सोती थी, मैं मां से.'

'क्या मैं वो आ.. मतलब बाबा से लिपट कर सोती

थी,' वह चौंक कर बोली.

'हां और क्या लाड़ली जो थी उनकी, किसी को तुझे कुछ कहने भी नहीं देते थे, बहुत प्यार करते थे वो हम दोनों को, तू तो उनके जाने के बाद कितने दिन तक रोती रही थी. तुझे कुछ याद नहीं पगली,' सिर पर हाथ फेरते हुए भाई ने कहा तो उसने अपनी आंखें ऊपर आसमान में गड़ा दीं. नीले आसमान में बादलों के गुच्छे घूम रहे थे, उसमें उसे दिखाई दिया, अपना बचपन, नल के पाइप से उसे नहलाते, मस्ती करते बाबा की धुंधली याद, पीले रंग की गुलाबी फूल वाली फ्रॉक जो उसे बाबा ने दिलवायी थी. चोटी रोड के पास की दुकान की जलेबी और कचोरी, उसके मुंह में गुलकन का टुकड़ा डालते बाबा, उसके बाल संवारते बाबा, बारिश में उसके साथ भीगते बाबा, नीले आसमान पर दौड़ लगाते बादलों पर बनती-बिगड़ती आकृतियों में उसे अपना धुंधला बचपन दिखाई देने लगा, धीरे-धीरे बाबा उनसे दूर होते भी दिखे, वो तीनों और अब उसकी पलकें नींद से बोझिल हो गयी थीं, भाई के हाथ सिर सहलाते रहे और वहीं वो सो गयी.

भाई की आंखें बिजली के खंमे से निकल रही पीली रौशनी पर गड़ी थी. अचानक वह पीली लाइट सिनेमा की लाइट जैसी हो गयी और सामने की दीवार पर जैसे फ़िल्म चलने लगी, स्कूल छोड़ने जाते बाबा, सायकल के आगे लगी छोटी सीट पर उसे बिठाते बाबा, दादा-दादी की झिड़की सहते मां से लड़ते बाबा. मन होने पर अपने हाथ से बड़ी दुकानों में मिलने वाले कपड़े जैसे हूबहू कपड़े सिलते बाबा, चौराहे के हनुमान मंदिर में रामायण गाते बाबा, और रामलीला में हनुमान बनते बाबा. उसे भी एक बार बंदर बनाया था और बीच रामायण में उसकी पूंछ गिर गयी थी और वह वहीं खड़े हो कर रोने लगा था. चेहरे पर एक मुस्कान दौड़ गयी और आंख से दो बूंद टपक गयीं, वही तो हैं बाबा, फिर क्यों, केवल वक़्त की खाई तो आयी है बीच में, एक दुर्घटना ने दूर कर दिया उन्हें, सोचते-सोचते उसकी भी आंख लग गयी.

उधर दोनों पति-पत्नी, वह बोला, 'मुझे याद करते थे बच्चे'?

पत्नी ने हाथ पकड़ कर कहा, 'कौन-सा ऐसा दिन था जो याद नहीं किया, बेटू तो बहुत साल तक सामान्य नहीं हुआ, कहता रहा बाबा को मेरे किये की सजा मिली, लेकिन तुम्हारे जाते ही पिता बन गया वो, बड़ा हो गया, मुन्नी का तो इतना ध्यान रखता, मेरा भी, धीरे-धीरे सब ठीक हो जाएगा, अचानक आना हुआ ना तुम्हारा, इसलिए थोड़े संकोच में हैं, तुम भी थोड़ा आगे बढ़कर बातें करो. बच्चे ठहरे, डरते हैं.'

'तुम नहीं डरती मुझसे,' उसने पहली बार बिना संकोच की नज़र से पत्नी की तरफ़ देखते हुए कहा.

'धत्त, तुमसे डरूंगी', धीरे से अपना सर उसके कंधे पर रखते हुए कहा, 'जानते हो कैसे काटे मैंने दिन, कैसे बचाया अपने को इस जालिम दुनिया से, कैसे तुम्हारे आने के दिन गिनती रही.'

उसने भी पत्नी के बाल सहलाते हुए कहा, 'जीवन ने अपनी बड़ी परीक्षा ली री, कोई ग़लती नहीं होते हुए भी.., बच्चे बाप से दूर हो गये, मैं उनका बचपन नहीं देख पाया, अब यह समय मिला है ना, उनके साथ ख़ूब जीना चाहता हूं.'

हां, यह जमी हुई बर्फ़ प्रेम के स्पर्श से ही पिघलेगी, जोर के हथौड़े से तो बिखर जायेगी, कुछ हाथ नहीं लगेगा.

चारों मन ही मन निश्चय कर चुके थे. उसने सोच लिया था शुरुआत उसे ही करनी पड़ेगी.

'बेटी को सच पता है,' उसने पूछा.

'बेटे को तो पता है, रश्मि को अब तुम ही बताना, अब सो जाओ,' कहकर पत्नी ने बत्ती बंद कर दी. बरसों से पथरीली जमीन पर बेगाने बिस्तर पर सोने की आदत ने आज अपने बिस्तर पर असहजता से ही सोने दिया उसमें घर की महक थी, कितनी रातें इस इंतज़ार में गुज़ार दीं कि घर लौट कर पत्नी के साथ सुनहरे पल साझा करूंगा, बच्चों के साथ मस्ती करूंगा फिर से एक परिवार बनेगा, लेकिन क्या अब ऐसा हो पायेगा?

उधर पत्नी पति की मज़बूत बाहों की याद में बिसरती रही इतने बरस लेकिन अब अपनी ही बाहों का तकिया ले सोने की आदत हो गयी, वो प्रेम भरे दिन ग़रीबी में भी ख़ुशियों का ढेर याद आने लगे.

फिर सुबह के इंतज़ार में धीरे-धीरे आंखों में नींद उतर आयी.

एक सप्ताह इसी भारी माहौल में गुज़र गया.

एक सुबह उठते ही पत्नी ने उसे बच्चों के कमरे में बच्चों को उठाने भेजा, वह थोड़ा संकोच में था क्या पता बच्चे कहीं अपमानित न कर दें, 'मुझे विश्वास है, हमारे

बच्चे हैं, तुम जो उनको उठाओ वैसे ही जैसे पहले उठाते थे,' पत्नी ने उसे कमरे की ओर ठेलते हुए कहा.

बड़ी झिझक से वह कमरे में दाख़िल हुआ. बच्चे सो रहे थे, उनके मासूम चेहरे देख मन भर आया, वह कहां देख पाया इनका भरा पूरा बचपन. कहां खेल पाया, बेटे के साथ तो फिर भी वक़्त गुज़रा, बेटी सात साल की थी तभी उस हादसे ने उनकी ज़िंदगी बदल दी थी.

क़दमों की आहट पा बच्चों ने आंख खोली. वह सकपका गया लेकिन फिर हिम्मत जुटा कर बोला, 'चलो चलो उठो देखो सुबह हो गयी, उसने सप्रयास हंसने की कोशिश की, 'पानी भी आने वाला है पानी भरना है तुम्हारी मां ने चाय बना ली है, सब साथ में बैठ कर पीते हैं, चलो चलो.' बच्चे थोड़े असमंजस में थे लेकिन बेटा चहक उठा. चल मुन्नी उठ सच में देख सुबह हो गयी है, फिर काम भी शुरू करना है, वरना तेरा खडूस बॉस कलपने लगेगा,' कहते-कहते बेटे ने ऐसा मुंह बनाया कि दोनों की हंसी निकल गयी. उसने संतोष की सांस ली, आज की इस सुबह ने थोड़ा भारीपन तो कम किया. उसे लगने लगा अब सब ठीक हो जाएगा, शायद भगवान ने यह अवसर इसलिए ही दिया है, सबने मिल कर साथ में चाय पी. थोड़ी हल्की फुलकी बातें होने लगीं, 'क्यों तेरे सारे दोस्तों के क्या हाल हैं मुन्नू, चेती और वो कौन बकोर जो बहुत बोलता था सब ठीक हैं,' उसने बेटे से पूछा. 'बाबा सब अपने-अपने काम धंधे पर लगे हैं,' बेटे ने जवाब दिया.

'तेरी सहेलियां भी तो होंगी' बेटी की तरफ़ देखते हुए कहा देखा. बेटी मुसकुराते हुए सब देख रही थी, 'हां हैं ना.'

'और तेरे स्कूल कॉलेज़ के सब क़िस्से बताना मुझे,' बेटी से कहा.

बेटी ने धीरे से सिर हिलाया.

पत्नी ने कहा, 'मनोज भइया के दोनों बेटों की शादी हो गयी. भाभी अभी भी वैसी ही है.

रायपुर वाली बुआजी का हाथ टूट गया था, बड़ी मुश्किल से ठीक हुआ, पूना वाली मौसी गुज़र गयीं, जिसकी ख़बर मैंने तुम्हें दी थी, उनकी बेटी इसी शहर में ब्याही है.'

तुम्हारे दोस्तों की ख़बर तो मैं तुम्हें बताती रही हूं, सौदा ने दूसरी शादी कर ली शराबी पति को छोड़ कर बच्चों को भी साथ ले गयी.'

सौदा उसके दोस्त मोहन की पत्नी, 'अच्छा किया, वो था ही इस लायक,' उसने कहा.

'चलो नल आ गये,' पत्नी ने कहा.

तीनों ने, बाप बेटे और बेटी ने, मिल कर पानी भरा. तभी उसे न जाने क्या सूझी पाइप लेकर उसने सबको वहीं आंगन में भिगो दिया, 'ए ये अरे बाप रे बाबा, सबको गीला कर दिया अब,' सब चिल्लाए एक साथ.

'अब क्या, नहाना तो था ही न बस नहा लिये, तुम लोग छोटे थे तब भी तो ऐसे ही नहला देता था,' कहकर उसने पानी की तेज़ धार सब पर डाली और खुद भी भीग गया, पत्नी बच्चे सब भीग गये.

'चलो चलो मैं मसाले वाली चाय बनाती हूं, सब कपड़े बदल कर आ जाओ, आज ऐसा ही स्नान,' पत्नी ने कहते–कहते पानी के साथ गालों पर बह आये आंसू चुपके से पोंछते हुए कहा.

आज वह ख़ुश था, उसने पानी के साथ अपने रिश्तों पर जमी धूल भी बहा दी थी. बच्चों के मन भी खिले-खिले से थे, आज घर का माहौल बहुत हल्का-हल्का महका महका-सा था.

बच्चे भी सहज हो चले थे, इसी तरह दिन गुज़रने लगे, कभी साथ बैठ पुराने एल्बम देखे जाते तो कभी ताश शतरंज की बैठक जमती.

एल्बम देखते-देखते बच्चों के साथ अपनी तस्वीरें देख वह भावुक हो जाता, फिर बाद के सालों में बच्चों के फ़ोटो उसके बिना देख कर भी, वे अकेले आगे बढ़ते रहे. वह उनके साथ नहीं था, बच्ची के डांस के फ़ोटो में, पालक मीटिंग में, सारे त्योहारों में, इन दस सालों में वह नहीं था. पत्नी कहती, 'तुम नहीं होकर भी थे हमारे साथ.' बच्चे भी दिलासा देते, 'बस अब कुछ महीने बाद हम सब साथ साथ होंगे.

अपनी जवानी के दिनों को याद करके वह बताता उसके हाथ में सिलाई का बड़ा हुनर था लेकिन था वह मनमौजी. मां बाप चिल्लाते लेकिन वह पत्नी और बच्चों के साथ मौज मस्ती में रहता. हां महीने में दस दिन काम करता लेकिन पूरे महीने की कमाई उगा लेता ऐसी ऐसी डिजाईंन के कपड़े सिलता कि लोग उसे ढूंढ़ ढूंढ़ कर पूछते हुए आते, इस छोटे से क़स्बे में उसके गुज़ारे लायक ज़मीन और धंधे से सब बढ़िया चलता, ज़्यादा का उसे लालच था नहीं यही मनमौजी पन उसे ले बैठा. महीना भर गुज़र गया था और बच्चों और उसके बीच स्नेह का बंधन फिर से जुड़

गया था, वैसा ही जैसे सामान्य माता-पिता के साथ होता है.

एक दिन मुन्नी ने भाई से रात को पूछा, 'भइया बाबा को यह सज़ा क्यों मिली, क्या किया था बाबा ने, लोग कहते हैं उन्होंने हत्या की थी किसी की?'

भाई ने किताब से सर उठाकर उसे एक गहरी नज़र से देखा, 'हां, हत्या ही थी, लेकिन वो हत्या उन्होंने नहीं मैंने की थी.'

'क्या', बहन जैसे धड़ाम से गिरी, भय से उसकी आंखें फैल गयीं. 'भइया आपने,' उसने मुश्किल से थूक गटकते हुए कहा, उसका चेहरा सफ़ेद पड़ गया था, उसका प्यारा भाई जो एक चींटी नहीं मार सकता, ख़ून देखकर डर जाता है. एक बार उसकी कोहनी छिल गयी थी, साइकिल से गिर कर तो ख़ून देख कैसा हो गया था, वो भाई किसी की हत्या, ख़ून कैसे कर सकता है?

बहन की हालत देख वह धीरे से बोला, जैसे कहीं दूर देख रह हो, 'रामलीला की रात थी, हम सब रामलीला में गये थे, बाबा रामलीला में हनुमान बनते थे और मैं छोटा बंदर, तू भी मां के साथ रामलीला देखने आयी थी. उस रात पता नहीं कब तू मां को बिना बताए सुसु करने थोड़ी दूर बने अस्थाई बाथरूम की तरफ़ निकल गयी, वहां बैठे दो गुडों ने तुझे पकड़ कर तेरे साथ गंदी हरकत करने की कोशिश की. तभी मैं और पापा बाथरूम करने पहुंचे, पास से गोगो की आवाज़ और अजीब सी हलचल देख बाबा जोर से चिल्लाते हुए उधर भागे, दोनों बदमाश उनके हत्थे चढ़े ख़ूब मार पिटाई हुई, तेरी हालत देख मैं घबरा गया, गुस्से में मैंने एक बड़ा पत्थर एक आदमी के मुंह पर मार दिया, उसके बाद दो तीन वैसे ही बड़े पत्थर... मैं जब तक मारता रहा तब तक कि पापा ने मुझे वहां से जबरन नहीं धकेल दिया. इस मार पीट में एक बदमाश घायल हुआ, और जिस पर मैंने बड़े-बड़े पत्थर मारे थे वह मर गया, पापा जैसे-तैसे तुझे मुझे लेकर वापस रामलीला के पंडाल तरफ़ आए तब लोगों को पता चल कि क्या हुआ. बाबा ने मुझे कुछ भी बोलने से मना किया था. कहा मैं संभाल लूंगा, उसके बाद तू और मैं बड़े दिनों तक बीमार रहे, डॉक्टर, पुलिस की गाड़ी हमारे घर आती. मैं चुपचाप देखता रहता, उस बदमाश को तो सज़ा हुई. लेकिन बाबा को भी हत्या के जुर्म में सजा हुई, मेरे पाप को बाबा ने अपने सर ले लिया, और दस साल से वह सज़ा केवल बाबा नहीं हम सब झेल रहे हैं. बाबा ने मुझे बचाने के लिए अपनी ज़िंदगी के दस साल जेल में निकाल दिये', एक सिसकी-सी निकालते हुए वह बोला. उसकी आंखों से आंसू बह निकले.

उसने बहन की तरफ़ देखा वह बिलख-बिलख कर रो रही थी. दौड़ कर भाई से लिपट गयी, 'भइया बाबा और तुमने मेरे लिए यह सब किया, और मैं बाबा को...,'कहते-कहते वह रो पड़ी.

भाई ने उसके सिर पर हाथ फेरा, 'कोई नहीं अब हम सब कसर पूरी कर लेंगे, बाबा की कुछ महीनों की सज़ा बाक़ी है, फिर सब साथ में मजे से रहेंगे. मां ने क्या कम सहा है वो तो पुराना मकान और सब बाबा करके गये थे, नहीं तो हम क्या करते, चल सो जा, कल से बाबा के लिए जो थोड़ी बहुत दूरी थी ना तेरे मन में अब वो भी दूर हो जाएगी.

१८ बी वंदना नगर एक्स.
इंदौर-४५२०१६. (म. प्र.)
मो.: ९००९०४६७३४

लघुकथा

चोर

डॉ. लोकेंद्रसिंह कोट

कॉलोनी में चोर की चोरी पकड़ी गयी, उसे पकड़ कर सरेआम पीटा गया. अधमरी हालत में उसे सिपाही ले गये. सभी कॉलोनीवालों ने राहत की सांस ली. सारे घटनाक्रम के हीरो भी चर्चा में हैं. उनमें से एक हैं वर्मा, जिन्होंने ख़ूब मारा चोर को... और जो खुद सस्पेंड हैं दो साल से... तीन नंबर वाले खन्ना तो चोर को पकड़ कर बाहर घसीटते हुए लाए... जो कमाई से अधिक आय रखने के चक्कर में इन दिनों सीबीआई की जांच के घेरे में हैं... खान भी कम नहीं थे उन्होंने ही चोर को जमायी थी सबसे ज़्यादा लातें... जो पिछले दिनों रंगे हाथों रिश्वत लेते हुए पकड़े गये थे.... कुल मिलाकर संपूर्ण कॉलोनी चैन में है क्योंकि चोर अब सलाखों के पीछे है.

नैवैद्य, १७-ए, आदिनाथ कॉलोनी,
डाइवर्जन रोड,
बड़नगर-४५६७७१ जि. उज्जैन.
मो. : ९४०६५४१९८०

ग़ज़लें

✍ राजेंद्र निशेश

बहुत कुछ कह जाती है रात सिसकियों में
चांद भी आ बैठा है अभी खिड़कियों में ।

नदी ने भी आज कैसी करवट बदली है
मचा हुआ है तूफ़ान-सा मछलियों में ।

धरती का हरेक कोना आज प्यासा है
ना बच पाया है थोड़ा जल बदलियों में ।

मौसमों पे कोई ऐतबार कैसे करे
छलावा ही छलावा है इन आंधियों में ।

सुनहरे सपनों को है किसने छीन लिया
नाच रही है भूख आकर इन झुग्गियों में ।

इस सांझ की उदासियों को तोड़ते हुए
इक गोरैया आ बैठी है सीढ़ियों में ।

चलो गिरगिट का किरदार जिया जाये
ख़ुद अमृत, दूजे को ज़हर दिया जाये ।

इंसान की फितरत है रंग बदलना
आप ही बोलिए, इसे क्या कहा जाये ।

पैसों के लिए पागल इस दुनिया को
झूठ के तराज़ू पर तोल लिया जाये।

सियासत की गंगा तो मैली रही है
इमान को कैसे ज़िंदा किया जाये।

नफ़रत की चिंगारी घर जला देती है
प्यार के झरने को बुला लिया जाये।

२६१८, सेक्टर ४०-सी, चंडीगढ़-१६००३६.
मो. ९४१७१०८६३२

कविता

रक्त की प्यास

✍ देवेंद्र कुमार मिश्रा

और जब वे युद्ध करते-करते
थक गये
तो थकान मिटाने के लिए,
उन्होंने संधि कर ली,
पूरी धरती रक्त और बारूद से गंदी
कर ली.
वे फिर लड़ेंगे
धर्म, जाति और विश्व विजेता बनने
के लिए,
बस थकान मिटा रहे हैं
युद्ध उनका स्वभाव हैं
शांति का उनके पास अभाव है.
वे क्या जाने प्रेम की बातें
वे खाते हैं, सोते हैं और लड़ते हैं

उन्हें शुद्ध करने के लिए
कोई बुद्ध चाहिए
बुद्ध वे तलाशेंगे नहीं
और बुद्ध के पास जाना पड़ता है.
प्यासा जाता है कुंए के पास,
लेकिन उनकी अपनी ज़िद है
हत्या, दमन और आक्रमण
इन्हें या तो कृष्ण मिले या महावीर
मर जायेंगे या अहिंसा से भर जायेंगे,
अभी ये रुकने वाले नहीं,
रक्त की प्यास बिना थमने वाले नहीं,
और रक्त से किसकी बुझती है प्यास
भड़कती है आग में घी की तरह.

पाटनी कॉलोनी, भरत नगर, चंदनगांव, छिंदवाडा (म. प्र.)- ४८०००१. मो. : ९४२५४०५०२२

आमने-सामने

तेज धूप के बाद शीतल छांव अधिक अच्छी लगती है...

✍ ताराचंद मकसाने

बहुत बार होता है कि पाठकों से लेखक केवल अपनी रचनाओं के माध्यम से ही बात नहीं करना चाहता बल्कि सीधे पाठक के सामने अपने मन की गांठ खोलना चाहता है, लेखक और पाठक के बीच की दीवार ख़त्म करने का प्रयास है यह स्तंभ, 'आमने-सामने'. अब तक मिथिलेश्वर, बलराम, (स्व.) प्रो. कृष्ण कमलेश, कृष्ण कुमार चंचल, संजीव, (स्व.) सुनील कौशिश, डॉ. बटरोही, राजेश जैन, डॉ. अब्दुल बिस्मिल्लाह, कुंदन सिंह परिहार, अवधेश श्रीवास्तव, श्रीनाथ, राम सुरेश, विजय, विकेश निझावन, नरेंद्र निर्मोही, पुन्नी सिंह, श्याम गोविंद, प्रबोध कुमार गोविल, स्वयं प्रकाश, मणिका मोहिनी, राजकुमार गौतम, डॉ. रमेश उपाध्याय, सिद्धेश, डॉ. हरिमोहन, डॉ. दामोदर खड़से, रमेश नीलकमल, चंद्रमोहन प्रधान, डॉ. अरविंद, (स्व.) सुमन सरीन, डॉ. फूलचंद मानव, मैत्रेयी पुष्पा, तेजेंद्र शर्मा, हरीश पाठक, जितेन ठाकुर, अशोक 'अंजुम', राजेंद्र आहुति, आलोक भट्टाचार्य, डॉ. रूपसिंह चंदेल, दिनेश चंद्र दुबे, डॉ. कृष्णा अग्निहोत्री, जयनंदन, सत्यप्रकाश, संतोष श्रीवास्तव, उषा भटनागर, प्रमिला वर्मा, डॉ. गिरीश चंद्र श्रीवास्तव, प्रो. मृत्युंजय उपाध्याय, सुधा अरोड़ा, पं. किरण मिश्र, डॉ. तेज सिंह, डॉ. देवेंद्र सिंह, राकेश कुमार सिंह, रमेश कपूर, डॉ. उर्मिला शिरीष, रामनाथ शिवेंद्र, अलका अग्रवाल सिगतिया, संजीव निगम, सूरज प्रकाश, रामदेव सिंह, मंगला रामचंद्रन, प्रकाश श्रीवास्तव, सलाम बिन रजाक, मदन मोहन 'उपेंद्र', भोला पंडित 'प्रणयी', महावीर रवांल्टा, गोवर्धन यादव, डॉ. विद्याभूषण, नूर मुहम्मद 'नूर', डॉ. तारिक असलम 'तस्नीम', सुरेंद्र रघुवंशी, राजेंद्र वर्मा, डॉ. सेराज खान 'बातिश', डॉ. शिव ओम 'अंबर', कृष्ण सुकुमार, सुभाष नीरव, हस्तीमल 'हस्ती', कपिल कुमार, नरेंद्र कौर छाबड़ा, आचार्य ओम प्रकाश मिश्र 'कंचन', कुंवर प्रेमिल, डॉ. दिनेश पाठक 'शशि', डॉ. स्वाति तिवारी, डॉ. किशोर काबरा, मुकेश शर्मा, डॉ. निरुपमा राय, सैली बलजीत, पलाश विश्वास, डॉ. रमाकांत शर्मा, हितेश व्यास, डॉ. वासुदेव, दिलीप भाटिया, माला वर्मा, डॉ. सुरेंद्र गुप्त, सविता बजाज, डॉ. विवेक द्विवेदी, सुरभि बेहेरा, जयप्रकाश त्रिपाठी, डॉ. अशोक गुजराती, नीतू सुदीप्ति 'नित्या', राजम पिल्लै, सुषमा मुनींद्र, अशोक वशिष्ठ, जयराम सिंह गौर, माधव नागदा, वंदना शुक्ला, गिरीश पंकज, डॉ. हंसा दीप, कमलेश भारतीय, अजीत श्रीवास्तव, डॉ. अमिताभ शंकर रायचौधरी, श्याम सुंदर निगम, देवेंद्र कुमार पाठक, आनंद सिंह, डॉ. इंद्र कुमार शर्मा और आचार्य नीरज शास्त्री से आपका आमना-सामना हो चुका है. इस अंक में प्रस्तुत है ताराचंद मकसाने की आत्मरचना.

सबसे पहले तो मैं इसे अपना परम सौभाग्य कहूंगा कि मुझे हिंदी साहित्य की एक प्रतिष्ठित पत्रिका 'कथाबिंब' में 'आमने-सामने' स्तंभ के लिए अपना आत्मकथ्य देने के लिए आमंत्रित किया गया है.

जिस परिवेश और परिवार से मेरा ताल्लुक रहा है उसका शिक्षा और हिंदी साहित्य से दूर तक का कोई वास्ता नहीं था. मेरे पिता कक्षा तीसरी तक ही पढ़े थे और मेरी माता ने कभी स्कूल का मुंह नहीं देखा था. मैं मूलत: राजस्थान का हूं और हमारा पैतृक व्यवसाय सिलाई रहा है. मेरे पिता अपनी शादी के बाद परिवार के पालन-पोषण के लिए महाराष्ट्र में पुणे के पास एक गांव दौंड में आ गये थे और यहां पर उन्होंने एक सिलाई की दुकान खोल दी थी. मेरा जन्म दौंड में १९ अगस्त १९५८ को हुआ और बचपन का कुछ वक़्त यहीं बीता. कक्षा दूसरी पास होने के बाद मैं अपनी मां के साथ फिर राजस्थान में अपने पैतृक गांव सिरियारी (जिला-पाली) आ गया, इसी गांव के स्कूल में फिर से मेरा दाख़िला कक्षा पहली में करवाया गया. मैं कुछ वर्षों तक विद्यानगरी के नाम से मशहूर राणावास में स्थित 'श्री आदर्श निकेतन छात्रावास' में भी रहा, जो जैन छात्रावास था.

मेरी स्कूली शिक्षा राजस्थान में ही हुई. मुझे अपनी दादी और नानी के पास रहने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ. मेरे घर से स्कूल (राजकीय प्राथमिक विद्यालय, राणावास) क़रीब एक किलोमीटर दूर था, हमारे मोहल्ले के हम चार-पांच बच्चे

कपड़े की थैलियों में क़िताबें ठूंसकर पैदल ही जाते थे. हरे-भरे खेतों के बीच-समीप बनी पगडंडी से स्कूल जाने का रास्ता था. मेरे स्कूल की दशा मेरे घर की ग़रीबी जैसी ही थी. स्कूल के कमरों और खिड़कियों की केवल चौखटें बनी हुई थीं, दरवाज़े नहीं थे. शरारती बच्चों का आना-जाना खिड़कियों से ही होता था. मेरा बचपन ग़रीबी में बीता, पैरों में टूटी हुई एकमात्र चप्पल (नीले रंग की दो पट्टियोंवाली स्लीपर), जिसके आगे अंगूठे के पास लगी 'सेफ़्टीपिन' दोनों तरफ़ से आगे की ओर आनेवाली पट्टियों में टूटी हुई एक पट्टी को मज़बूती से पकड़ कर रखने का काम करती थी. स्कूल में टिफ़िन के नाम पर दोपहर की छुट्टी में खाने के लिए कपड़े के एक चौकोर टुकड़े में दो रोटियों के बीच सूखी सब्ज़ी रखी जाती थी. कभी सब्ज़ी न होने पर आम का अचार या छिले हुए प्याज के टुकड़े और एक हरी मिर्च होती थी. दोपहर में स्कूल के प्रांगण में नीम के पेड़ की छांव में बैठकर खाने का जो मज़ा आता था उसकी पुनरावृत्ति ज़िंदगी में आज दिन तक नहीं हुई. मैंने बचपन में चूल्हे में जलाने के लिए सूखी लकड़ियां बीनना, उपले बनाने के लिए गोबर लाना, कुएं से पानी खींचना आदि काम भी किये हैं. उन दिनों बिजली नहीं थी, शाम को लालटेन में केरोसिन भरना व उसका गोला (कांच) साफ़ करना नित्यकर्म बन गया था, इस कार्य में बहुत सुकून मिलता था. लालटेन की रोशनी में स्कूली शिक्षा पूरी हुई.

सरकारी विद्यालय में अपनी प्राथमिक शिक्षा पूरी होने के बाद मैंने अपने गांव के एक प्राइवेट स्कूल 'श्री सुमति शिक्षा सदन उच्च माध्यमिक विद्यालय' में प्रवेश लिया. इस विद्यालय में एक विशाल पुस्तकालय था तथा वाचनालय की भी अच्छी सुविधा थी. पुस्तकालय के पीरियड में मैं वाचनालय में बैठकर पत्र-पत्रिकाएं पढ़ता था. पुस्तकालय में प्रादेशिक समाचार पत्रों के अलावा कईं पत्रिकाएं भी आती थीं — 'सरिता', 'मुक्ता', 'बालभारती', 'चंदामामा', 'पराग', 'चंपक', 'नंदन' आदि. इसी स्कूल के समृद्ध पुस्तकालय की बदौलत मुझ में पढ़ने की जो रुचि और दिलचस्पी बढ़ी, वह इसी स्कूल की देन है, अगर मैं ऐसा कहूं तो शायद ही कोई अतिश्योक्ति होगी. मुझे जब भी समय मिलता मैं पुस्तकालय में जाकर पत्रिकाएं पढ़ने बैठ जाता था. मुझे पहेलियां, कविताएं पढ़ने का बहुत शौक़ था. जब मैं कक्षा ५ वीं में था तब मेरी एक पहेली 'बालभारती' में प्रकाशित हुई थी. यह मेरी ज़िंदगी की पहली रचना थी. मुझे कविताएं और कहानियां पढ़ने का शौक़ बचपन से ही रहा है. मुझे विशेषकर प्रेमचंद की कहानियां बहुत अच्छी लगती थीं. बालावस्था में ही मैंने प्रेमचंद की सभी कहानियां पढ़ ली थीं, — कफ़न, ईदगाह, पंच परमेश्वर, ईश्वरी न्याय, पूस की रात, बड़े घर की बेटी आदि मेरी पसंदीदा कहानियां हैं. मुझे इसी अवस्था में ही 'गोदान', 'गबन', 'निर्मला' आदि उपन्यास भी पढ़ने का अवसर मिला था. बचपन में सरिता पत्रिका पढ़ते समय मैं सोचा करता था कि बड़े होने पर मैं सरिता के लिए कहानियां लिखूंगा, मेरा यह सपना भी समय के साथ पूरा हो गया. मुझे व्यंग्य भी बहुत पसंद हैं, मैंने हरिशंकर परसाई और शरद जोशी की प्राय: सभी पुस्तकें पढ़ी हैं. मैं बचपन में जब शरद जोशी की व्यंग्य रचनाएं पढ़ता था तब मैंने शायद ही यह सोचा होगा कि जीवन में आगे एक दिन मुझे इस महान लेखक का इंटरव्यू करने का मौक़ा मिलेगा जो 'कथाबिंब' पत्रिका में प्रकाशित होगा. मैं इसे अपने जीवन की एक बड़ी उपलब्धि मानता हूं कि मुझे ख्यातनाम व्यंग्यकार शरद जोशी से मुलाक़ात करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ.

विद्यालयीन शिक्षा के बाद मैं फिर दौंड (पुणे) आ गया और बी. कॉम की पढ़ाई के लिए पुणे में 'नेसवाडिया कॉलेज़ ऑफ़ कॉमर्स' में दाख़िला ले लिया. हिंदी के प्रति मेरी रुचि और रुझान को देखते हुए हिंदी विभाग के तत्कालीन प्रमुख प्राध्यापक विश्वास अष्टेकर ने मुझे हिंदी विभाग का सचिव बना दिया. मुझे कॉलेज़ की गृह पत्रिका 'वाडियन्स' के हिंदी भाग का संपादन करने का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ. साथ ही मैंने 'आईना' नामक एक हस्तलिखित पत्रिका का दो वर्षों तक संपादन किया. ग़रीबी अब भी साये की तरह मेरा दामन थामे थी, पिताजी ने कॉलेज़ की शिक्षा का ख़र्च देने से स्पष्ट रूप से मना कर दिया था, उनका कहना था ख़ुद कमाओ और पढ़ो. मैंने कॉलेज़ के दिनों में पुणे में नौकरी भी की थी. मेरा कॉलेज़ सुबह का था, कॉलेज़ से छुट्टी होने के बाद मैं नौकरी पर जाता था. मैंने पुणे में मंड़ई इलाक़े में स्थित रेडिमेड कपड़ों की एक दुकान अमोल गारमेंट्स में नौकरी की थी. कॉलेज़ की शिक्षा पूरी होने के बाद अच्छी नौकरी मिलने तक मैंने पुणे में ही लक्ष्मी रोड पर स्थित एक साड़ी की दुकान 'जयहिंद साड़ी सेंटर' में नौकरी की, यहां पर मुझे एकाउंट्स का काम मिल गया था. इस दुकान में नौकरों को सुबह और शाम की चाय के लिए

कूपन मिलते थे जिसे एक चाय की दुकान में देने पर चाय मिलती थी, मगर मैं अपनी आर्थिक तंगी के कारण दोनों समय की चाय नहीं पीता था, मैं सप्ताह भर के कूपनों को एकत्रित कर उनके बदले दुकानदार से पैसे लेता था मतलब कूपन्स 'एन्केश' करवाता था. दुकानदार को मुझ पर दया आती थी वह मुझे कई बार मुफ़्त में बिना कूपन लिये चाय पिला देता था.

कुछ समय के बाद मुझे पुणे से ही प्रकाशित होनेवाले 'आज का आनंद' नामक एक दैनिक समाचार पत्र में बतौर सहायक संपादक नौकरी मिल गयी तो मैंने 'जयहिंद साड़ी सेंटर' की नौकरी छोड़ दी. मैं आज भी जब कभी पुणे जाता हूं तो 'अमोल गारमेन्टस' और 'जयहिंद साड़ी सेंटर' दुकानों को दूर से नमन करता हूं, क्योंकि मुसीबत के दिनों में मैंने यहां नौकरी की थी. दैनिक 'आज का आनंद' में नौकरी के दौरान मुझे समाचार लिखना, रिपोर्टिंग करना, फ़िल्मों की समीक्षा लिखना, प्रूफ़ रीडिंग करना आदि सारे काम सीखने का सुनहरा मौक़ा मिला. मैं हिंदी और मराठी फ़िल्मों की समीक्षा लिखा करता था, मराठी फ़िल्मों के कलाकारों के इन्टरव्यूज़ भी करता था. मुझे जुही बेर्डे, दादा कोंडके, अशोक सराफ़ आदि के इंटरव्यूज़ करने का अवसर मिला. इन्हीं दिनों मैंने मराठी नाटकों एवं फ़िल्मों के प्रख्यात निर्देशक डॉ. जब्बार पटेल का भी साक्षात्कार किया जो 'माधुरी' पत्रिका में प्रकाशित हुआ था.

दैनिक 'आज का आनंद' में मेरा वेतन मात्र सौ रुपये प्रतिमाह थे, अपनी आय बढ़ाने के लिए मैंने अख़बार डालने का भी काम किया. इसी बीच मैं अच्छी नौकरियों के लिए भी आवेदन कर रहा था. मैंने कई जगह आवेदन कर रखे थे. वर्ष १९८२ में मुझे मुंबई में 'भारतीय रिज़र्व बैंक' में नौकरी मिल गयी तो मैंने 'आज का आनंद' की नौकरी छोड़ दी और मुंबई आ गया.

मुंबई आने के बाद भी मैंने अपना लेखन कार्य ज़ारी रखा, मुझे फ़िल्में देखने का भी बहुत शौक़ था. मैं मुंबई में आयोजित फ़िल्म फ़ेस्टिवल की सभी फ़िल्में देखा करता था. 'जनसत्ता', 'हिंदी स्क्रीन', 'नवभारत टाइम्स' में मेरे फ़िल्मी लेख छपने लगे. जनसत्ता में धीरेंद्र अस्थाना से मेरा परिचय हुआ, उनके संपादन में प्रकाशित होनेवाले 'जनसत्ता' के परिशिष्ट 'सबरंग' के लिए मैंने बहुत सारी 'कवर स्टोरीज़' लिखी थीं. मायानगरी मुंबई में आने के बाद मैंने बहुत सारे फ़िल्मी कलाकारों के इंटरव्यूज़ किये जो 'सरिता', 'मुक्ता', 'गृहशोभा' आदि पत्रिकाओं में नियमित रूप से प्रकाशित होते थे जिनमें स्मिता पाटील, नौशाद अली, आनंद बख्शी, सई परांजपे, नाना पाटेकर, महेंद्र कपूर, इंदीवर, पीनाज मसानी, वनराज भाटिया, सुरेश वाडकर, रोहिणी हट्टंगडी, जॉनी लीवर, कविता कृष्णामूर्ति, अल्का याज्ञनिक, सदाशिव अमरापुरकर आदि प्रमुख हैं.

'भारतीय रिज़र्व बैंक' में नौकरी मिलने के बाद मेरी आर्थिक स्थिति सुधरने लगी थी. मैंने ज़िंदगी में पहली बार बेल्ट ख़रीदी और ज़िंदगी में पहली बार लेदर शूज़ भी ख़रीदे. अब तक पैंट के बाहर लटकनेवाले शर्ट को मैंने पैंट के भीतर खसोटकर वर्षों से मुंह लटकाए बेल्ट का इंतज़ार करती हुई कड़ियों में बेल्ट लगाकर 'इन' करना सीख लिया. अब मेरे रहन-सहन में थोड़ा बदलाव आने लगा, मैं बैंक का बाबू लगने लगा था. मुंबई में कुछ समय तक 'पेइंग गेस्ट' रहा फिर नालासोपारा में ख़ुद का फ़्लैट ख़रीद लिया. जब मैं गिरगांव में 'पेइंग गेस्ट' रहता था तभी 'कथाबिंब' से जुड़ने का मौक़ा मिला. 'कथाबिंब' से जुड़ना मेरे लिए एक अहम और सुनहरा अवसर था, मैंने 'कथाबिंब' के लिए काम करना शुरू किया. 'कथाबिंब' के पहले पन्ने पर संपादकीय सहयोग में अपना नाम देखकर मैं गर्व से फूला नहीं समाता था. 'कथाबिंब' के लिए काम करना मेरे लिए किसी सम्मान से कम नहीं था. इसी दौरान भाई साहब माधवजी के निवास पर पहले चेंबूर फिर देवनार में मेरा नियमित रूप से आना-जाना होता था. इसी दौरान कई साहित्यकारों से भी मेरा परिचय हुआ.

मुझे भारतीय रिज़र्व बैंक में नौकरी के दौरान 'प्रतिबिंब' नामक एक हस्तलिखित पत्रिका का संपादन करने का मौक़ा मिला था. बैंक की गृहपत्रिका 'विदाउट रिज़र्व' में भी मुझे लेखन का अवसर मिला, इस पत्रिका के 'रजत पटल' नामक स्तंभ के लिए मैं आज भी फ़िल्मी आलेख लिख रहा हूं. भारतीय रिज़र्व बैंक में प्रतिवर्ष मनाए जानेवाले हिंदी समारोह का संचालन करने के ढ़ेरों अवसर मिले जिससे 'स्टेज़ फियर' दूर हो गया और मंच पर बोलने का 'कॉन्फीडेंस' बढ़ा.

भारतीय रिज़र्व बैंक की बदौलत मेरी ज़िंदगी में नया सवेरा आ गया, आर्थिक तंगी से निजात मिल गयी. ज़िंदगी में कभी साइकिल ख़रीदने की हैसियत नहीं थी, अब मैंने

कार ख़रीद ली थी. अपनी ज़िंदगी में कभी हवाई जहाज से सफर करने का सपना भी नहीं देखा था, बैंक में रहते वह भी पूरा हो गया. मुझे अमेरिका, स्वीज़रलैंड, फ्रांस, इटली, वेटिकन सिटी, सिंगापुर, मलेशिया, थाईलैंड, दुबई, इंग्लैंड आदि देशों की यात्रा करने का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ. बचपन में आईफेल टॉवर, माउंट टिंटलीज, लंडन ब्रिज़, पीसा की झुकती हुई मीनार, बिग बैन, बकिंघम पैलेस, वाईट हॉउस, स्टेच्यू ऑफ़ लिबर्टी, नायगरा फॉल्स आदि के चित्र केवल क़िताबों में ही देखे थे, इन्हें प्रत्यक्ष रूप से देखने का सपना भी पूरा हो गया.

पिछले कुछ समय से मैं बच्चों के लिए कहानियां लिख रहा हूं. मेरी ज़्यादातर कहानियां 'सुमन सौरभ' और 'बाल भारती' पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं. वर्ष २०१९ में बाल कहानियों की मेरी पहली पुस्तक 'बूंद तथा अन्य कहानियां' शीर्षक से 'आर के प्रकाशन' ने प्रकाशित की है. बाल कहानियों की मेरी दूसरी पुस्तक 'सच्चा मित्र तथा अन्य कहानियां' तथा 'माना हुआ रिश्ता' नामक कहानी संग्रह प्रकाशाधीन है जो फरवरी-मार्च २०२१ तक प्रकाशित हो जाएंगे. 'कथाबिंब' के साथ-साथ 'सरिता', 'गृहशोभा', 'मधुमती' आदि. पत्रिकाओं में मेरी कहानियां प्रकाशित होती रहती हैं.

मेरी धर्मपत्नी उमा कक्षा तीसरी तक ही पढ़ी है. एक आदर्श पत्नी के रूप में वह मेरे संघर्ष के दिनों में साये की तरह मेरी हमसफ़र बनी रही. कहते हैं कि गांव की लड़की अशिक्षित हो सकती है पर असंस्कारित नहीं हो सकती है. मैं तो नौकरी के सिलसिले में दिनभर घर से बाहर रहता था और घर चलाने की सारी ज़िम्मेदारी उमा के कंधों पर ही रहती थी. बच्चों पर सुसंस्कारों की थाप भी वही लगाती. उमा ने एक आदर्श पत्नी और एक आदर्श मां का किरदार बख़ूबी निभाया है. मेरे दो बेटे हैं और दोनों डॉक्टर हैं. बड़ा बेटा नितिन एक फार्मा कंपनी में सीनियर मेडिकल एडवाईज़र है तथा छोटा बेटा सुशांत मंदसौर (मध्यप्रदेश) में एक मेडिकल कॉलेज़ में लेक्चरार है तथा उसका अपना 'श्री विश्वश्री' नामक आयुर्वेदिक क्लीनिक है. मेरी बड़ी बहू डॉ. शालिनी मुंबई में जी एस मेडिकल कॉलेज़, परेल में असिस्टेंट प्रोफ़ेसर है. मेरी छोटी बहू नैन्सी ने बी. फॉर्म किया है और प्रतापगढ़ (राजस्थान) में एक सरकारी अस्पताल में बतौर फार्मासिस्ट नौकरी कर रही है.

मैं वर्ष २०१८ में भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई के केंदीय कार्यालय से ३८ वर्ष की सेवा के बाद बतौर सहायक प्रबंधक सेवानिवृत्त हुआ हूं. सेवानिवृत्ति के बाद मैं खारघर, नवी मुंबई में रह रहा हूं.

महाराष्ट्र मेरी जन्मभूमि और कर्मभूमि रही है. मैं महाराष्ट्र की इस पवित्र भूमि को अंत:करण से नमन करता हूं जिसने मुझे रोज़ी-रोटी के साथ-साथ मेरी सृजनशीलता को एक नयी ऊंचाई प्रदान की है. मेरा अधिकांश मित्र परिवार मराठी भाषी है जिनके सान्निध्य में रहकर मैंने शुद्ध मराठी बोलना सीख लिया जिससे मुझे मराठी फ़िल्में और नाटक देखने के साथ-साथ मराठी साहित्य पढ़ने में भी बहुत सहूलियत हुई. मैंने पु. ल. देशपांडे, वि. स. खांडेकर, व. पु. काळे, रत्नाकर मतकरी, साने गुरूजी आदि प्रख्यात लेखकों का साहित्य पढ़ा है और कई मराठी फ़िल्में देखी हैं तथा कई नाटकों का आनंद लिया है.

आज यह आत्मवृत्त लिखते हुए अपनी ज़िंदगी के अतीत के पलों को फिर से जीने का एक मौक़ा मिला है कभी चेहरा खिलखिलाया तो कभी नयन नम हो गये, अतीत की कठिन डगर पर चलते वक़्त पैरों में पड़े छाले याद आ गये तो ख़ुशियों के जो पल कभी जिये थे उन्हें याद कर दिल को सुकून भी मिला.

आदरणीय माधवजी से सृजन की जो अनवरत प्रेरणा मिल रही है वह मुझ में एक नये उत्साह का सृजन कर रही है. 'कथाबिंब' के लोकप्रिय स्तंभ 'आमने-सामने' के माध्यम से मैं एक बात ज़रूर कहना चाहूंगा कि ज़िंदगी में अगर आप ईमानदारी से अपने पथ पर अग्रसर हैं तो जीवन में आपको सफलता निश्चित रूप से मिलेगी. मैं अपनी ज़िंदगी के कठिन पथ पर निरंतर ईमानदारी से चलता रहा, मैंने कभी भी किसी को गिराकर या पीछे धकेलकर आगे बढ़ने या कुछ पाने का प्रयास नहीं किया. मैं यह जानता हूं कि मुसीबत के दिनों में बग़ैर हिम्मत हारे, ईमानदारी और सत्यनिष्ठा का दामन थामकर आगे बढ़ने की कोशिश करनेवालों को कामयाबी ज़रूर मिलती है, यह मेरे जीवन का निजी अनुभव है. तेज़ धूप में तपने के बाद शीतल छांव का आनंद कुछ अलग ही मज़ा देता है.

ए-५०२, 'यशवासीन',
सेक्टर–२७, खारघर,
नवी मुंबई–४१०२१०
मो. ९९६९३७५८५१
ईमेल– *tmaksane@gmail.com*

डॉ. रखमाबाई भिखाजी राउत : काठ में छिपी चिंगारी

✍ डॉ. राजम पिल्लै

'विवाह याने क्या होता है, यह समझने तक की उम्र मेरी नहीं थी, उस उम्र में मुझ पर यह विवाह लादा गया. इसलिए मुझ पर इस विवाह (को निभाने) की ज़बरदस्ती नहीं की जा सकती.'

'अरे! शांतं पापम् शांतं पापम् ।।' जिस युग में किसी स्त्री के मुंह से अपने विवाह के संबंध में 'चूं' तक नहीं निकल सकती थी; पति-स्वामी — 'धनी' (मराठी में प्रयुक्त शब्द), 'यजमान' (मराठी में प्रयुक्त शब्द) लंपट हो, व्यसनी हो, पत्नी को मारे-पीटे या सोने के गहनों से मढ़कर देवी-सा रखे, स्त्री के मन में बस यही एक रक्षा-मंत्र गूंजता रहता था — 'हे कुलदेवता, मुझे सधवा ही इस दुनिया से उठा लेना!... गले में मंगलसूत्र, हाथ में हरी चूड़ियां, और ललाट पर कुंकम का टीका बना रहे, बस इतनी ही मनौती मांगती हूं.'

उस युग में एक 'सधवा स्त्री ने सार्वजनिक रूप से अदालत में यह बात कही, यह दलील रखी और पति के घर जाने/भेजे जाने और पति के मतानुसार उसे पारंपरिक और क़ानूनी तौर से मिले 'वैवाहिक अधिकारों' को मानने से इंकार कर दिया. समाज में तूफ़ान उठा, अख़बारों में बवंडर मचा, 'आजीवन सामाजिक बहिष्कार' का हौव्वा नहीं असली भय से आगाह किया गया; क़ानून ने भी यह फ़ैसला दिया — १) या तो वह अपने पति के घर जाकर उसकी पत्नी के रूप में विहित कर्तव्यों का पालन करें (२) या छ: महीने के कारावास की सज़ा भोगे और उस स्त्री ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि वह कारावास की सज़ा भोगने को तैयार है पर अपने पति के साथ रहने और सहवास करने को कतई तैयार नहीं है.

कौन थी वह स्त्री? किस सामाजिक परंपरा से आयी थी? क्या उसके परिवार में इस प्रकार के आक्रोश, विद्रोह, मुखर-सक्रिय विरोध की कोई मिसाल पहले से थी?

काठ में छिपी चिंगारी :

वह प्रतिरोध, विरोध की आवाज़ थी — रखमाबाई जनार्दन सावे (राउत) की!

सामान्य मध्यवर्गीय परिवार. सन १८६४ में जन्म हुआ. मां, जयंतीबाई के जीवन-क्रम ने शायद रखमाबाई को बहुत भीतर से झकझोर दिया और टूटने और बिखरने के बजाय वह कड़ी हो गयी 'काठ' की तरह, उस काठ की तरह जिसमें आग छिपी रहती है और संघर्षों के घर्षण से चिंगारी छिटक निकलती है.

मां का विवाह १४ साल की उम्र में हुआ, १५ साल में वह मां बनी और १७ साल में विधवा हो गयी. 'बाल-विवाह' का दुष्परिणाम और 'बाल-विधवा' की सामाजिक पारिवारिक दुर्गति को बालिका रखमाबाई ने देखा था और महसूस किया था. लेकिन एक सौभाग्य की बात यह थी कि उसके जाति-जमात में विधवा का पुनर्विवाह हो सकता था सो मां जयंती बाई का दूसरा विवाह एक विधुर डॉ. सखाराम अर्जुन राउत से हुआ जो जाने-माने वनस्पतिशास्त्र के अध्यापक थे और शल्य-चिकित्सा भी सिखाते थे. उनकी उपस्थिति ने जैसे सुदृढ़ पृष्ठभूमि उस परिवार को और मां-बेटी को प्रदान की और कालांतर में उसी के बल-बूते पर रखमाबाई ने

व्यक्तिगत स्तर पर क़ानूनी लड़ाई की और बाद में विदेश जाकर डॉक्टरी की पढ़ाई की; एम. डी. की उपाधि पायी और भारत की पहली महिला 'प्रेक्टिसिंग डॉक्टर' का विरुद पाया. महाराष्ट्र की डॉ. आनंदीबाई जोशी यद्यपि 'पहिली महिला डॉक्टर' थी लेकिन अस्वस्थता की वजह से वे प्रेक्टिस नहीं कर पायी थीं.

पर रखमाबाई के सामने बहुत जल्द ही विरोध, निंदा, लगभग बहिष्कार का दुर्गम विंध्याचल पर्वत अवरोध बनकर खड़ा होने वाला था.

डॉ. राजम पिल्लै

अयाचित 'ख्याति' / 'कुख्याति' :

रखमाबाई का विवाह हुआ, बाल-विवाह ही. लगभग १०-११ वर्ष की उम्र में उसकी शादी १९ वर्षीय दादाजी भिकाजी के साथ हुई. रखमाबाई मायके ही में रही और पढ़ाई करती रही पर उधर दादाजी के स्वभाव तथा चरित्र में गिराव आता गया.

दादाजी ने कुछ समय बाद रखमाबाई को ससुराल में रहने और पत्नी के रूप में अपने पारंपरिक दायित्व को निभाने के लिए बुलावा भेजा. रखमाबाई तब लगभग बारह वर्ष की थी उसने ससुराल जाने से इंकार कर दिया.

दादाजी भिकाजी बनाम रखमाबाई मुकदमा, १८८४

दादाजी भिकाजी ने रखमाबाई के खिलाफ़ मुकदमा दायर किया जिसमें अदालत से मांग की गयी थी कि क़ानून और परंपरा के अनुसार पति के साथ रहना पत्नी का कर्तव्य है और चूंकि रखमा पति दादाजी के बुलावे के बावजूद ससुराल आने को तैयार नहीं है सो अदालत दादाजी के पक्ष में फ़ैसला दे और उनके पति के अधिकारों की पुनर्स्थापना करे.

रखमाबाई के परिवार ने धीरे-धीरे तत्कालीन समाज के सुधारवादी, प्रगतिशील, परिवर्तन समर्थक व्यक्तियों और संगठनों के साथ संबंध बनाये रखा था सो अब यह मामला केवल एक व्यक्ति और परिवार का नहीं रह गया था. रखमाबाई ने जब पति के साथ रहने से साफ़-साफ़ इंकार कर दिया, और यहां तक कहा कि वह कारावास की सज़ा भोगने को तैयार है लेकिन पति दादाजी के 'अधिकारों' को मान्यता देने को कतई तैयार नहीं है तो भारत से लेकर ब्रिटेन तक के अख़बारों, सामाजिक कार्यकर्ताओं के बीच इस मामले को लेकर लगभग तूफ़ान-सा मच गया. भारत में तो जैसे साफ़-साफ़ दो टुकड़े हो गये — एक परंपरावादी और दूसरा परिवर्तनवादी. उस समय, बंगाल और अन्य प्रदेशों में भी इस प्रकार का वातावरण पहले से बना हुआ था. परंपरावादी मानते थे कि विदेशी सरकार और विदेशी क़ानून भारतीय समाज के सनातनी ढांचे में दख़लंदाजी नहीं कर सकते.

रखमाबाई की मुक्ति और गगनचुंबी उड़ान

मुक़दमा सन १८८४ से १८८८ तक चला. आख़िरकार दादाजी ने सेटलमेंट स्वीकार किया. अदालत और हितचिंतकों द्वारा नियत धन-राशि दादाजी को देकर रखमाबाई मुक्त हो गयी.

'London School of Medicine for Women' (लंदन स्कूल ऑफ़ मेडिसन फ़ॉर विमेन) से डॉक्टर बनकर १८९४ में भारत लौटी. एम. डी. की उपाधि भी अर्जित की.

भारत लौटकर उन्होंने गुजरात में कई वर्षों तक, विशेष रूप से महिला प्रसूति के क्षत्र में उल्लेखनीय काम किया.

डॉ. रखमाबाई की लड़ाई केवल उनकी व्यक्तिगत यशस्विता को पाने की लड़ाई नहीं थी. सन १८९१ में भारत में Age of Consent Act (विवाह-सहमति की न्यूनतम उम्र का क़ानून) पारित हुआ तो रखमाबाई के जीवन को एक प्रतिमान के रूप में रखा गया.

डॉ. रखमाबाई राउत का निधन सन १९५५ में ९१ वर्ष की उम्र में हुआ. उन्होंने अपना सारा जीवन सेवा और सामाजिक विकास के लिए अर्पित कर दिया था.

डॉ. रखमाबाई 'काठ में छिपी चिंगारी' को लेकर सार्वजनिक जीवन में उपस्थित हुईं और धीरे-धीरे उन्होंने सिद्ध कर दिया कि वह 'काठ', चंदन का था. स्वयं घिसकर छीजकर-जलकर, समग्र वायुमंडल को स्वस्थ, प्रसन्न, सुवासित करनेवाला चंदन.

६०१–ए, रामकुंज को. हॉ. सो.,
रा. के. वैद्य रोड,
दादर (प.), मुंबई-४०००२८.
मो.: ९८२०२२९५६५.
ई-मेल : rajampillai43@gmail.com

'एक अप्रतिम व्यक्तित्व'

✍ शशि कांडपाल

कथाकार– रूपसिंह चंदेल, व्यक्तित्व, विचार और कृतित्व (गद्य) : संपादक : माधव नागदा
प्रकाशक : *नीलकंठ प्रकाशन, अंसारी रोड, दरिया गंज, नयी दिल्ली- ११०००२.* ***मूल्य :*** *७९५/–*

कहते हैं सपने सच होंगे लेकिन इसके लिए आपको वो सपना पूरी शिद्दत से देखना भी होगा! तो क्या कथाकार ने अपने शुरुआती दिनों में अपने इस विराट व्यक्तित्व का सपना देखा होगा? देखा तो था! कच्चे घर की ठंडी, सौंधी कोठरी थी, बरौठे पर दरी के ऊपर कथरी, चादर बिछाकर, सफ़ेद कागज़ों को मोड़कर, उस पर क़लम चला कर! यह इस यात्रा का शुद्ध प्रारंभ था.

किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व के हमेशा दो पहलू होते हैं. एक बाहरी जिसे सबने देखा होता है, दूसरा व्यक्तिगत जो निजी होता है. आम मनुष्यों की तरह एक लेखक का जीवन भी बहुआयामी होता है. एक तरफ़ उसके दोस्त, परिवार, लोगों से मिलकर बनने वाला व्यवहार और दूसरी तरफ़ उसका रचनाओं की कल्पना का संसार जो मोहक है, समाज में कई प्रश्न खड़े करता है, लोगों को अपनी योग्यता से हतप्रभ करता है और अपने रचनात्मक संसार से लोगों की बात को समाज के सामने रखता है.

मैं यह समझती हूं कि लेखक/कथाकार का काम सिर्फ़ हवाई बुलबुले बनाकर क़िताब छपवाना नहीं होता. उसका समाज के प्रति ज़िम्मेदार होना, वर्तमान में छप रहे साहित्य के अवलोकन के प्रति संवेदनशील होना, उसकी भाषा का सर्व ग्राह्य होना ही उसे पाठक तथा साहित्य के क्षेत्र में प्रामाणिक बनाता है. बात कर रही हूं अघोषित इतिहासकार तथा घोषित कथाकार,आत्मचिंतन से उपजे तथा भोगे गये यथार्थ को सर्व ग्राह्य भाषा में अपने पाठकों के दिल तक पहुंचाने वाले, क़लम के उपासक वरिष्ठ कथाकार रूप सिंह चंदेल की. कभी इतिहास उनके साहित्य में स्वाभाविक रूप से आ जाता है और कभी वो ख़ुद ही ऐतिहासिक घटनाओं का विवेचन सृजन करने में रुचि रखते हैं और इसमें पाठकों को नयी जानकारी मिलती है. आज बात उनके कृतित्व के साथ-साथ उनके व्यक्तित्व की भी हो रही है, उन्हें व्यक्तिगत रूप से जानने वालों के विचारों की ज़रूरत समझी गयी. माधव नागदा जी का विचार था कि जिस कथाकार के उपन्यासों पर इतने शोधार्थी शोध कर चुके हों, कई दोस्त, दुश्मन हों तो क्यों न 'रूप सिंह चंदेल' पर लोगों की राय ली जाए, देखें लोग किस नज़रिए से उन्हें पहचानते हैं, उनकी किस विशेषता के प्रति आकर्षित हैं या किस बात पर आपत्ति रखते हैं. नागदा जी ने उनके प्रति जान पहचान के ब्योरे के साथ उनकी कृतियों की समीक्षा भी आमंत्रित की. उसे एक क़िताब का रूप दिया. क़िताब का नाम है 'कथाकार रूप सिंह चंदेल : व्यक्तित्व, विचार और कृतित्व.' इस क़िताब के पन्नों में उनकी रचनाओं के साथ-साथ उनके चुंबकीय व्यक्तित्व की भी कई परतें खुलती नज़र आती हैं जिसे उनका पाठक पढ़कर आनंदित होगा. उनके बारे में कई अनकही, अनजानी बातों से अवगत हो सकता है. शोधार्थियों के लिए तो यह क़िताब उस कुंजी-सी है जिसे पढ़ना अवश्यंभावी हो जाएगा. क़िताब के प्रारंभिक अध्याय एक में कथाकार ख़ुद अपना परिचय दे रहे हैं, उन संघर्षों का रेशा-रेशा छान रहे हैं जो आज उनकी सफलता को देखते हुए असंभव लग रहा है लेकिन इसका संदेश बेहद स्पष्ट है कि पीपल को छायादार होने से पहले कितने झंझावातों से गुज़रना पड़ा होगा, जड़ों के फैलाव की ज़मीन तलाशनी पड़ी होगी तभी आज लोग उसे एक मुकाम मानते हैं, वृक्ष का आसरा लेते हैं और नि:संदेह कुछ लोग शाखाओं को झनमना कर अपनी खीज भी उतारते हैं लेकिन इससे वटवृक्ष को क्या फ़र्क पड़ना है? बस इस क़िताब को पढ़ना, देखना बड़ा दिलचस्प होगा.

इस क़िताब का संपादन माधव नागदा जी ने किया है. वो स्वयं प्रसिद्ध लेखक हैं और चंदेल जी के घनिष्ठ मित्र हैं. पुस्तक तीन अध्यायों में विभक्त है — व्यक्तित्व, विचारधारा

और कृतित्व. अध्याय एक भी दो भागों में है — प्रथम भाग–'जीवन पथ पर' में लेखक का आत्मकथ्य — 'संघर्ष से मेरा गहरा रिश्ता है', दूसरे भाग में लेखक — 'साहित्यकारों की दृष्टि में'. अध्याय दो में लेखक के साक्षात्कार, और अध्याय तीन : 'आलोचकों की दृष्टि में' लेखक की पुस्तकों पर आलेख और समीक्षाएं हैं.

आत्मकथ्य में चंदेल जी के जन्म से लेकर बचपन, किशोर, युवा, असफल, संघर्ष, सफल, समझौते न करने की ज़िद तथा इस सब बातों के बावजूद अपने लेखन के प्रति 'वको ध्यानम' सा भाव आपको भावपूर्ण कर देगा. जुनून की सटीक परिभाषा परिलक्षित होती है और वह कई उन लोगों के लिए प्रेरणा भी है और तमाचा भी जो अपने जुनून के बीच में आने वाली बातों से डर कर या हार कर रास्ता बदल लेते हैं. यहां तो कथाकार अपने जुनून के लिए अपनी नौकरी से वालिंटरी रिटार्यमेंट तक ले डालते हैं.

ग़रीबी ने इस हीरे को तराशने में बड़ी अहम भूमिका निभाई. वो चाहे भाई की शादी के वक़्त शादी में मेहमानदारी के लिए चीनी की किल्लत का दंश हो या शिक्षक द्वारा फटी कमीज़ का अवलोकन. रामलीला देखने भाई के ससुराल जाने पर भाभी के घरवालों द्वारा दिये गये अच्छे कपड़े उस स्वाभिमानी किशोर को प्रफुल्लित न कर सके और रामलीला देखने का सारा उत्साह जाता रहा जो बताता है आर्थिक स्थिति जैसी भी रही हो आत्मसम्मान में कोई कमी न थी.

क़िताब पढ़ते वक़्त सोचा आख़िर एक लेखक को कैसा लगता होगा जब वो अपने साथी मित्रों, कनिष्ठ लेखकों, प्रकाशकों और एक हद तक आलोचकों की नज़र से ख़ुद को जानता होगा. क्या उसे विश्वास होता होगा कि ये सब उसके बारे में सच सच कह रहे हैं? एक पारदर्शी व्यक्ति को तो ज़रूर समझ आ जाता होगा ये फ़र्क और विचार व्यक्त करने वालों की भी अपनी रेपुटेशन है जो किसी स्वार्थवश नहीं बल्कि जैसा उन्हें जाना, पाया को लिखने में अपना आश्चर्य, ख़ूबियां, प्रभाव लिखेंगे और जो नज़दीकी मित्र हैं वो अपनी दोस्ती की पोल खोल सकते हैं, कमियों को एंजॉय कर सकते हैं, एक दूसरे की हंसी भी उड़ा सकते हैं और भावुक होकर पाठक की आंखें नम भी कर सकते हैं, आइए जानते हैं इस खट्टे-मीठे से आचार को आंखों से पढ़कर... तीखेपन की मिठास के साथ.

'उनसे कभी मिला नहीं, नयन भर देखा भी नहीं,
फिर भी लगता है जैसे वो बचपन के दोस्त हों?'

क्या इन पंक्तियों से किसी की सरलता, अभिन्न मित्र होने के लिए पर्याप्त गुणों के होने की संभावना का पता नहीं चलता? ये पंक्तियां श्री राजकुमार अवस्थी जी की हैं जो अपने लेख में कथाकार का परिचय देते हुए उनके कृतित्व का उल्लेख करते हैं कि उनकी रचनाएं मराठी, कन्नड, बंगाली, पंजाबी, गुजराती आदि भाषाओं में छपने से उनके व्यक्तित्व के विराट होने का साम्य देते हैं, इसे वे उनकी भाषा के कथ्य तथा भाषा शैली के वैशिष्ट्य एवं लोकप्रिय होने का प्रमाण मानते हैं. उनके प्रारंभिक दिनों से लेकर हर संघर्ष पर उंगली रखते हैं और इस जीत के लिए भूरि-भूरि प्रशंसा भी करते है. कथाकार की शैक्षिक उपलब्धियां भी बड़ी प्रेरणादायक हैं, सो उनका ज़िक्र करते हुए रूसी साहित्य के प्रति रुचि और उसके अनुवाद का ज़िक्र करना भी नहीं भूलते.

क़मर मेवाड़ी साहित्य के क्षेत्र का बहुत बड़ा नाम हैं जिनके परिचय की कोई आवश्यकता नहीं. वो कथाकार को उपन्यासकार, समीक्षक, साक्षात्कारकर्ता, संस्मरण लेखक, सफल अनुवादक, बाल साहित्य के लोकप्रिय रचनाकार के साथ साथ मस्तमौला तबीयत के मालिक के रूप में जानते हैं और अवसाद या परेशानी के दौरान रूप सिंह चंदेल से संपर्क हो जाए तो उसका निदान चुटकियों में हो जाता है, ये एक ऐसा गुण है जो अब ग़ायब होता जा रहा है. वो उन्हें एक बड़े दिल वाला लेखक मानते हैं और उसके लिए उनके पास बहुत अकाट्य तथ्य भी हैं.

बद्रीसिंह भाटिया रूपसिंह चंदेल को 'कोमल हृदय का कठोर व्यक्ति' मानते हैं. ये मेरे लिए बड़ी चौकाने वाली बात थी. भाटिया जी ने अपने आलेख में यह स्पष्ट किया है कि वह अत्यधिक संवेदनशील कथाकार हैं, लेकिन साथ ही उतना ही स्वाभिमानी भी और जहां उनका स्वाभिमान आहत होता है वह कठोर हो जाते हैं.

इला प्रसाद जी को मैं व्यक्तिगत रूप से नहीं जानती लेकिन उनका परिचय भरपूर प्राप्त है. चंदेल जी एक मित्रजीवी व्यक्ति हैं और उससे भी ज़्यादा उन्हें लोगों को सहायता करने में ख़ुशी मिलती है. इला जी को उनका अनवरत मार्गदर्शन आदरणीय, विश्वसनीय, पथ प्रदर्शक, गुरू, मित्र बनाता है जिसे इला जी अपना अहोभाग्य मानती हैं. साहित्य की दुनिया में यदि कोई मशाल लिये आपका पथ निस्वार्थ भाव से आलोकित करे तो इससे बड़ा सहारा, सौभाग्य क्या हो सकता है! चंदेल जी की तरफ़ से इला जी को दी गयी

ये सीख हर नवोदय को अपने गांठ बांध लेनी चाहिए कि 'आप किसी राजनीति में नहीं हैं. आपका लेखन ही आपको बचा सकता है. समय सबसे बड़ा निर्णायक होता है और चाहे लोग कितनी भी उठा-पटक कर लें अंत में उत्कृष्ट लेखन ही बचता है. लिखती रहिए और छपती रहिए वरना ये भी सच है कि जनता की याददाश्त बहुत कमज़ोर है.'

जयराम सिंह गौर जी ने अपने विचार बहुत भावुक होकर लिखे हैं जिसे मृदुता से पढ़े जाने की दरकार है. उनकी मुलाक़ात का मज़मून कुछ यूं है कि गौर सर अपनी क़िताब 'मंडी' पर किसी प्रतिष्ठित लेखक से समीक्षा लिखवाने की सोच रहे थे सुयोग्य पात्र मिल भी गये लेकिन एक महीने बाद उनके रुखाई से मना करने पर रूप सिंह चंदेल सर की सहायता लेने की सोची गयी और आशा के विपरीत उन्होंने न सिर्फ़ संकलन मंगवाया बल्कि अपने व्यवहार से निकटतम मित्र, छोटे भाई जैसे बन गये. चंदेल सर जिसकी भी ज़िंदगी में जाते हैं उसे उंगली पकड़ कर लेखन का रास्ता अवश्य दिखलाते हैं. प्रोत्साहित करना, मदद करना उनकी आदत है. गौर साहब, रूप सिंह चंदेल सर को सर्वश्रेठ श्रेणी का साहित्यकार मानते हैं क्योंकि न तो धन का प्रभाव, न किसी पद का बल्कि अपनी क़लम की ताकत से अपनी प्रतिभा का सिक्का चलाने वाले रूप सर गौर जी की निग़ाहों में सर्वश्रेष्ठ कथाकार हैं.

कथाकार अरविंद कुमार सिंह के चंदेल जी से मिलने से पहले काफ़ी मनगढ़ंत बातें उन तक पहुंच चुकी थीं लेकिन समय के साथ बढ़ती मुलाक़ातों ने उनकी सोच को पुख़्ता किया कि रूप सिंह चंदेल एक बेहद अनुशासित, सरल, गांव से जुड़े, कर्मठ तथा अपनी धुन के पक्के व्यक्ति हैं. वो अभिमानी नहीं बल्कि स्वाभिमानी हैं और हों भी क्यों न, क्योंकि अरविंद जी के अनुसार उन्होंने जो ख्याति और नाम लेखन से अर्जित किया है उसके पीछे उनकी मेहनत, संवेदनशीलता और लेखकीय कौशल है न कि कोई तिकड़म या प्रायोजित चर्चाएं.

'गर समझो कांच तो सफ़्फ़ाक नजर आऊंगा,
समझ सको तो अजीम,
तोड़ो तो चुभ जाऊंगा.
मैं आईना हूं,
सौ टुकड़े भी कर दोगे,
तो भी तुम्हारी असल शक्ल ही दिखाऊंगा...'

ये बेसाख़्ता निकली पंक्तियां बैठे बिठाये की उपज नहीं थीं बल्कि रूप सिंह चंदेल सर के बारे में सटीक विचार पंक्तियों में ढाल पाने की बेचैनी थी. एक पल दूसरों को रास्ता दिखाते दूसरे पल किसी की अनुचित बात से पंगा ले रहे होते. अगला कुछ पल तक आंखें तरेरता, फिर सम्मान की दुहाई देता, फिर लानत भेजता, फिर सफ़ाई देता लेकिन चंदेल सर कहां झुकने वाले? आख़िर धमकाता हुआ विरोधी नौ दो ग्यारह हो जाता. मुझे हंसी आ जाती कि सत्य सिर्फ एक के साथ हो सकता है और मैदान वही नहीं छोड़ेगा जिसके पास तर्क के हथियार नहीं होंगे और सत्य झुके भी क्यों? यही व्यवस्था विरोधी सोच कथाकार को 'भीड़ में' कहानी लिखने को बाध्य तो करती है लेकिन असल में भीड़ से अलग खड़ा कर देती है, स्वाभिमान के साथ कथाकार को भी और उसके नायक को भी. ये देखकर मेरे जैसे नौसिखिया उपरोक्त पंक्तियां बोल पड़ते हैं और लेखक को 'जैसा मैंने जाना, समझा' लिखने की जगह मिलती है जो एक सम्मान की बात है. बाक़ी अनुभव काफ़ी चटपटे रहे हैं जिसमें रूप सर के हंसोड़, विनोदी स्वभाव के साथ उन्हें हमेशा ख़ुश देखा है. न वो निराश होते हैं न दूसरे को करते हैं. लेखन के प्रति उनकी ऊर्जा, समर्पण बेहद काबिले तारीफ़ है.

'राम प्रसाद राजभर' एक बेहद संवेदनशील पाठक, चिंतक और व्यक्ति हैं. उन्होंने भी कथाकार के बारे में तमाम शायरी की सहायता ली है ताकि कम शब्दों में गहरी,ज़्यादा बात की जा सके. राजभर भी उनके प्रेरित करने की भावना और स्वाभिमान के रक्षार्थ लिये गये स्टैंड से काफी प्रभावित नज़र आते हैं. राजभर के अनुसार बनावटीपन अब सभी के व्यवहार में समाविष्ट है जिससे स्पष्टता गुम हो गयी है पर चंदेल जी के स्वभाव में अभी बची है इसीलिए लोग उनसे बचते हैं, बड़ी मज़ेदार बात कही है.

युवा लेखिका बिभा कुमारी चंदेल जी के उपन्यास 'रमला बहू' पर दिल्ली वि. वि. से एम. फिल. करने के दौरान मिलीं और उसके बाद से निरंतर उनके संपर्क में हैं. वह उनकी सरलता, सहायता से काफ़ी प्रभावित हुईं. एक अभिभावक की भांति वह उनकी बातें धैर्य से सुनते हैं और उन्हें उचित सलाह देते हैं.

दूसरे अध्याय में बलराम अग्रवाल, बिभा कुमारी, महावीर अग्रवाल और अमित कुमार राणा के साक्षात्कारों को सम्मिलित किया गया है. चंदेल जी ने सभी के प्रश्नों के बेबाक उत्तर दिये हैं. इन साक्षात्कारों को पढ़ना गहन अनुभव से गुज़रना है.

पुस्तक का अध्याय - तीन लेखक के कृतित्व पर केंद्रित है. जिसमें उपन्यासों पर — मधुरेश, वीरेंद्र कुमार गुप्त, डॉ. तेजसिंह, उमाशंकर परमार, डॉ. ओम निश्चल, रमेश कपूर, डॉ. राहुल, सुशील सिद्धार्थ, बलराम अग्रवाल, सुभाष नीरव, नागदा, डॉ. विभा कुमारी, शशि कांडपाल और जयराम सिंह गौर के आलेख और समीक्षाएं हैं, तो कहानी संग्रहों पर शशि कांडपाल, रमेश कपूर और संस्मरण पुस्तक पर बलराम अग्रवाल और वीरेंद्र कुमार गुप्त ने लिखा है. माधव नागदा ने लेखक की लघुकथाओं पर लिखा है जबकि जीवनी 'दॉस्तोएव्स्की के प्रेम' पर मुकुल कुमार का आलेख सम्मिलित है.

रूपसिंह चंदेल आज भी अनवरत क्रियाशील हैं और नयी पीढ़ी के लिए प्रेरणा बने हुए हैं. किसी भी क़िताब के बारे में पढ़ना और किसी क़िताब को पढ़ने में बहुत फर्क होता है सो इस लेख के बाद इस क़िताब को पढ़ा जाना न सिर्फ़ ज़रूरी है बल्कि रोचक भी है. सबको पुस्तकें भेंट देने वाले, ग्रामीण परिवेश से जुड़े स्वाभिमानी, विनोदी तथा स्पष्टवादी कथाकार रूप सिंह चंदेल को मेरी अशेष शुभकामनाएं.

१४/१००५, इंदिरानगर
लखनऊ- २२६०१६.

'शब्दों के परे': एक निराली दुनिया की सैर

डॉ. राजम पिल्लै

निबंध-संग्रह - ***विपिन पवार***
प्रकाशन - *परिदृश्य प्रकाशन, १ अनमोल, सोराबजी संतुक लेन, मरीन लाइन्स, मुंबई-४००००२.*
मूल्य : *२२५ रुपये*

'लेखन मेरे लिए प्रारंभ से ही बहुत महत्वपूर्ण रहा है. यह एक ऐसा माध्यम है, जो हमारी सोच को एक अनोखी दिशा देता है. हमें यह विचार करने पर विवश करता है कि हमारे आसपास घटित हो रही घटनाओं का क्या महत्व है? लेखन एक ऐसी प्रक्रिया है, जो हमें सही और ग़लत का एहसास कराती है. जो हम बोलते हैं, उसका कोई अभिलेख नहीं होता और कालांतर में वह विस्मृति के गर्त में चला जाता है...'

(विपिन पवार : शब्दों के परे : मनोगत)

लेखन विपिन पवार ने इसलिए लेखन का और उसमें भी निबंध-लेखन का सहारा लिया. सुधी समीक्षकों-आलोचकों की यह मान्यता है कि 'निबंध-लेखन गद्य की कसौटी होता है.' क्योंकि इस विधा में किसी रोचक कथा, मनभावन पात्र की बैसाखियां रचनाकार के पास नहीं होतीं; नाटककार की तरह चतुर संवादों की टेबल-टेनिस का खेल नहीं होता. निबंधकार के पास होता है — उसका विषय, उस विषय की अभिव्यक्ति सटीक रूप से कर सकने की भाषा और पाठकों तक अपना मंतव्य पहुंचा सकने में सक्षम शैली.

निबंधकार पहले ही से सुनियोजित रूप से यह तैयारी नहीं कर सकता कि अपने लिए, जिसे मराठी में 'पळवाट' (भाग निकलने का रास्ता) कहते हैं, वह बनाकर रखे. वह किसी मध्यकालीन रीतियुगीन शृंगार-रसलीन कवि की तरह यह चतुराई नहीं अपना सकता :

'आगे के सुकवि रीझिहैं तो कविताई।
न तु राधिका–गोविंद सुमिरिन को बहानो है।।'

शब्दार्थों की निराली दुनिया :

लेखक विपिन पवार ने अपने निबंध-संग्रह 'शब्दों के परे, में निबंधों में अपनी भावनाओं, मान्यताओं को बड़ी ही सहज, प्रसादपूर्ण भाषा शैली में व्यक्त किया है. कुछ स्थानों पर थोड़ा-सा वैचारिक आग्रह भी है पर दुराग्रह नहीं है इसलिए उनकी कतिपय मान्यताओं से असहमत होते हुए भी केवल 'मतभेद' उत्पन्न हो सकता है 'मन-भेद' नहीं.

उनके निबंधों के शीर्षक पढ़ते-पढ़ते पाठक में उन्हें आद्यंत पढ़ने की उत्सुकता जागती है. वे वर्षों से राजभाषा हिंदी से जुड़े हैं, मध्य रेल्वे में उप-महाप्रबंधक हैं सो सहज ही हिंदी के प्रयोजनमूलक रूप से उनका सरोकार घनिष्ठ और सुदीर्घ है. 'हिंदी फ़िल्मों की जान है हमारी रेल', 'राजभाषा हिंदी : अनंत संभावनाओं का क्षितिज', 'हिंदी का प्रयोग : क्यों होती हैं ग़लतियां' जैसे निबंध इस क्षेत्र में हो रही विकास यात्रा और उसके पड़ावों का परिचय कराते हैं.

विपिन पवार ने लेकिन हिंदी भाषा के सनातन-साहित्य-रचना के क्षेत्र को नज़रअंदाज नहीं किया है. 'साहित्य के सागर : अमृतलाल नागर' एक शोधपरक अच्छा निबंध है. पर्यटन स्थलों के जैसे हूबहू चित्रण करने में उन्हें महारत हासिल है. 'यात्रा ईश्वर के अपने देश की' में केरल प्रदेश और 'गौरव-गरिमा से भरपूर : कोल्हापुर' पढ़कर तो जैसे किसी कुशल टूरिस्ट गाइड का साथ मिल जाता है. व्यक्ति

चित्रण में उनकी क़लम थोड़ी भावुक भी हो जाती है. 'सबकी आई : पंडिता रमाबाई' और 'करुणा एवं सेवा की प्रतिमूर्ति : मदर टेरेसा' इसके सुंदर उदाहरण हैं.

'शब्दों के परे' — निबंध संग्रह के दो निबंध पाठकों के लिए एक अनूठी उपलब्धि बन जाते हैं. 'शब्दार्थ की निराली दुनिया' तो जैसे यह पुरानी कहावत चरितार्थ हो जाती है कि 'एक गली की बोली : दूसरी गली की गाली!!' 'एक जंग : कैंसर के संग' में तो जैसे कथा, नाटक, निबंध सभी विधाओं का करुण-उदात्त रसपूर्ण मिश्रण प्रस्तुत कर दिया है लेखक की लेखनी ने. इसके लिए वे साधुवाद के पात्र हैं.

विपिन पवार ने अपने निबंध-संग्रह 'शब्दों के परे' के मनोगत में एक बहुत ही मार्मिक मंतव्य प्रस्तुत किया है :

'क़लम एवं काग़ज़ हमारे सबसे अच्छे मित्र साबित हो सकते हैं. आप इन मित्रों से अपनी बात निस्संकोच कह सकते हैं. मेरा लेखन मुझमें जीवन जीने की आस जगाता है. मेरे अनुत्तरित प्रश्नों के उत्तर प्रस्तुत करता है. मुझमें एक नयी प्राणशक्ति एवं ऊर्जा का संचार करता है.'

धन्यवाद, विपिन पवार जी! आपने हमें एक मित्र 'शब्दों के परे' से परिचित कराया.

६०१–ए, रामकुंज को. हॉ. सो.,
रा. के. वैद्य रोड,
दादर (प.), मुंबई-४०००२८.
मो.:९८२०२२९५६५.
ई-मेल : *rajampillai43@gmail.com*

फूलों की दुनिया से परे!

✍ डॉ. विजय सती

'ट्यूलिप के फूल' *(क.संग्रह)* - ***एम. जोशी हिमानी***
प्रकाशक - *भावना प्रकाशन, १०९-ए, पटपड़गंज, दिल्ली-११००९१.* ***मूल्य :*** *१९५ रुपये*

सुपरिचित लेखिका एम. जोशी हिमानी का नवीनतम कहानी संग्रह है — 'ट्यूलिप के फूल'. इससे पहले लेखिका के दो कविता संग्रहों के अतिरिक्त उपन्यास 'हंसा आएगी ज़रूर' और कहानी संग्रह 'पिनड्रॉप साइलैंस' भी प्रकाशित हो चुके हैं.

जीवन के आरंभिक पंद्रह वर्ष पहाड़ में जीकर चालीस से भी अधिक वर्ष महानगर में बिताने वाली कथाकार के रग-रग में पहाड़ सांस लेता है. वर्तमान जीवन की हलचल, विडंबनाओं, सुख-सुविधाओं के बावजूद लेखिका का मन अतीत में लौटता रहता है. इस जीवन-क्रम ने लेखिका को अनुभवों का जो संसार दिया है —कहानियां उनके जिये हुए उसी जीवन से जुड़ी हैं. पहाड़-गांव-शहर, घर-बाहर-कार्यालय, व्यक्ति-समाज-अर्थ तंत्र — इन सबके बीच आवाजाही से बनी हैं ये कहानियां.

ट्यूलिप के फूल संकलन में पंद्रह कहानियां हैं, अधिकांश आकार में छोटी. संकलन की अपेक्षाकृत लंबी, पहली कहानी का शीर्षक है 'अधूरी कहानी'. इसकी पृष्ठभूमि विदेश है और केंद्र में प्रेम है, प्रेम भी वह जो परिंदे की तरह आसमान में उड़ गया. जिसके विषय में कथाकार ने जैसे अनुभव से जान लिया – 'कौन कहता है कि शांति, संतुष्टि और आनंद के लिए अध्यात्म का सहारा लेना चाहिए, प्रेम करना भी एक प्रकार का अध्यात्म ही है यदि वह निस्वार्थ भाव से किया जाए.' प्रेम तो प्रेम है – और वही इस कहानी का मूल कथ्य.

'मुआवज़ा' जागरूक जयंती और खड़गसिंह की अंतहीन प्रतीक्षा की दुखद परिणति की कहानी है. जयंती के जीवन का पहाड़ नशे में बेसुध पति के साथ का पहाड़ है. सुनसान बियाबान में भी उनके ज़िंदा रहने का जरिया खेत जब भूस्खलन में चौपट हो जाता है तो निठल्ले पति की आस मुआवज़े के स्वप्न पर जा टिकती है. इस आस में अंतहीन प्रतीक्षा, पटवारी की भूमिका और अंततः निराशा उन्हें गठरियां तैयार कर मैदान की तरफ़ पलायन करने को बाध्य करती है.

'गुणा भाग' रिश्वत खोरी की अटूट श्रृंखला को व्यक्त करती कथा है तो 'गुफा की ओर पहाड़' में एक युवा विधवा के सास के साथ प्यार भरे रिश्ते की कहानी है, जिसके लिए पहाड़ में भी फब्ती कसते शोहदे हैं. यह दुर्बल विधवा चनी आत्मरक्षा के लिए धीरे-धीरे सबल होती जाती है, यही कहानी में बारीक़ी से बुना गया है.

'एक कशिश ऐसी भी' मीना और खुसरो के प्रेम की ऐसी कथा है जिसका आरंभिक सार यह निकलता है कि धर्म प्रेम से बहुत बड़ा होता है. वह इतना ताकतवर होता है कि प्रेम को चिंदी-चिंदी कर उसका वजूद नष्ट कर सकता है.

इस कथा के बहाने लेखिका ने उस बड़े सच पर भी उंगली रखी है कि बड़े दंगों की शुरुआत कितनी ग़लतफ़हमियों और झूठ से होती है.

'ठिठुरन' वृद्ध-सेवानिवृत्त दंपत्ति दुर्गा-जयकिशन की कहानी है, भरपूर सर्दियों में जिनके घर में सुबह-सुबह भजन-कीर्तन की जगह महरी पुराण चल उठता है. 'अपार्टमेंट' सभ्यता पर व्यंग्य करती यह कहानी बताती है कि जो दुर्गा और जयकिशन हवा में लटकी–सी ज़िंदगी जीना नहीं चाहते थे, पहाड़-सी खड़ी इमारत की ओट में रहना उनकी नियति बन गया.

'भावना टी कॉर्नर' फिर एक बार पहाड़ कथा है. श्याम खेत में नानतिन महाराज के आश्रम के निकट रहने का निर्णय लेने पर सेवानिवृत्त मां को बच्चे जीवन का गणित समझाते हैं. लेकिन फेफड़ों में भरती साफ़ हवा का मोल समझने वाली मां यहीं आ बसती है. जीवन का लक्ष्य यदि शांति, सुकून और आनंद पाना है, तो सबको अपने ढंग से पाने की कोशिश करना ग़लत नहीं. यहीं मिल जाती है कथाकार को भग्गू यानी भागीरथी यानी भावना — सनकी पिता की बिंदास निडर पुत्री. जब लेखिका ने भग्गू और उसकी मां की शक्ति को जगाया, आत्मविश्वास से भरी 'भावना टी कॉर्नर' की मालकिन चुस्त-दुरुस्त भावना को देखा तो अनुभव किया कि जैसे ताज़ी हवा मिली हो !

'कौन थी वह?' रहस्य कथा की तरह आरंभ होती है. जिस रुबीना को पास-पड़ोस ने कभी हत्यारिन के रूप में देखा, कभी वेश्यावृत्ति के अड्डे पर जाने वाली माना, अंततः वह बेहतरीन काम को अंजाम देती देखी गयी. अंधेरे कमरे में नूर बिखेरती रुबीना धंधेवालियों के बच्चों को चित्र बनाकर दुनिया की ख़ूबसूरती दिखाती है, क्योंकि वह न बोल सकती है न सुन सकती है!

'प्रचार अधिकारी की आत्मकथा' अधिकार विहीन सरकारी अधिकारी दानसिंह मेहता की व्यथा कथा होने के साथ-साथ वर्तमान की विडंबना पर करारा तमाचा और दिखावों से परेशान मीडिया हॉउस के सच से रूबरू कराती कहानी है. 'पलायन' पंजाब के आतंकवाद प्रसंग को हलके से छू लेती है, 'मां मर नहीं सकती' मां की विशिष्ट स्मृति को टटोलती कहानी है तो 'नई बयार' एक नये संदेश की. मनपसंद जीवन साथी के साथ सादगी से विवाह करने को इच्छुक बेटी माता-पिता की सहमति को व्यग्र है, अंततः जीत उसी की होती है.

'एटीएम' विच्छिन्न होते पारिवारिक संबंधों पर दस्तक है. 'मालपा की ओर' कहानी भी पारिवारिक स्वार्थ को रेखांकित करती है जहां आपदा की राहत राशि को हथियाने की जुगत करने वाली पत्नी और बेटों को पिता विस्फारित नयनों से देखता है.

'ट्यूलिप के फूल' संग्रह की अंतिम कहानी है... प्रेम पर उस भरोसे की कहानी जिसने पहाड़ की बेटी गंगा को कुंवारी रहने को बाध्य किया और अब भी वह पुराने पैतृक घर को पुनः संजो कर उस वीराने में प्रेम की स्मृति में ट्यूलिप की खेती करना चाहती है.

कथाकार के पास निस्संदेह विषयों की विविधता है. चिरपरिचित से घटनाक्रम को वे अपनी कथन भंगिमा और दृष्टि से विशिष्ट बना देती हैं. वर्तमान जीवन में संबंधों का विचलन, सपनों की टूटन के बावजूद सशक्त स्त्री पात्र, कुछ बेबाक टिप्पणियां, इन कहानियों में गुंथ जाती हैं.

सभी कहानियां प्रगाढ़ कथा तत्व को लेकर चली हैं – यानी कहानी में कहानी ज़रूर है.

इन कहानियों में प्रेम जीवन की अनिवार्यता सरीखा व्याप्त है – चाहे वह सहपाठियों के साहचर्य से उपजा गंगा-शेखर का प्रेम हो, दूर देश में एकांत की देन हो या जीवन के अभावों को भूलने की आकांक्षा का प्रतिरूप भग्गू उर्फ़ भावना का असफल प्रेम.

कहानियों में छोटे-छोटे पहाड़ी विश्वासों की चर्चा अनायास समाहित है – 'भोर में उत्तर दिशा में ध्रुवतारा दिखने के बाद सोते रहने से घर में दरिद्रता का वास होता है.'

पहाड़ में अपने बचपन से कथाकार ने संभवतः दो बातें संचित की हैं — सच का कथन और ज़िद्दी संघर्ष. यह दोनों तत्व इन कहानियों में व्याप्त हैं.

कथाकार के पास एक समर्थ भाषा है जिसमें सरल प्रवाह है. उन्होंने चुस्त संवाद रचे हैं, कैसी सरल पर तीखी मार करने वाली शब्दावली है क्रुद्ध पत्नी की शराबी पति के लिए – 'सब मरेंगे एक दिन, ज़िंदा केवल तू ही रहेगा...तू तो ठर्रा पीकर जी जाएगा'.

पहाड़ के जीवन के अतिरिक्त अपने आसपास के संसार को खुली आंखों देखती-परखती-रचती ये कहानियां आमंत्रित करती हैं कि आप इन्हें पढ़ें !

'अभिराम', २२ हीरा नगर,
हल्द्वानी- २६३१३९ (उ. खं.)

आपके अपने पुस्तकालय के लिए ज़रूरी पुस्तकें

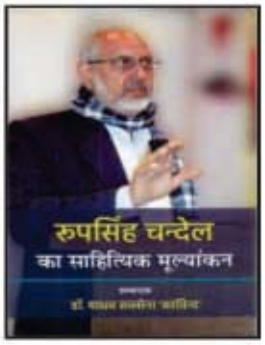

मूल्य
७२५ रु.

रूपसिंह चन्देल का साहित्यिक मूल्यांकन

सम्पादक : डॉ. माधव सक्सेना ''अरविंद''

अमन प्रकाशन, १०४-ए/८० सी रामबाग,
कानपुर-२०८०१२

ई-मेल : **amanprakashan0512@gmail.com**

मूल्य
३९५ रु.

जागती आँखों का सपना (कहानी-संग्रह)

लेखिका : मंजुश्री

नीरज बुक सेंटर, सी-३२, आर्यनगर सोसायटी,
प्लॉट-९१, आई.पी.एक्सटेंशन, दिल्ली-११००९२

ई-मेल : bhavna_pub@rediffmail.com

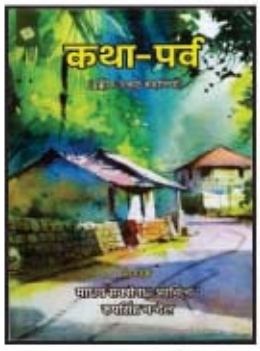

मूल्य
५२५ रु.

कथापर्व

अमन प्रकाशन, १०४-ए/८० सी
रामबाग, कानपुर-२०८०१२

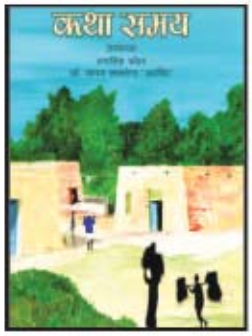

मूल्य
४०० रु.

कथा समय

के. एल. पचौरी प्रकाशन,डी-८, इंद्रापुरी,
लोनी, गाजियाबाद-२०११०२.

मूल्य
४२५ रु.

कानपुर टू कालापानी

अमन प्रकाशन, १०४-ए/८० सी
रामबाग, कानपुर-२०८०१२

२० प्रतिशत
छूट का
लाभ उठायें.

मूल्य
४५० रु.

बस्ती बरहानपुर

भावना प्रकाशन, १०९-ए,
पटपड़गंज, दिल्ली-११००९१

ई-मेल : **bhavna_pub@rediffmail.com**

"कमलेश्वर-स्मृति कथाबिंब कथा पुरस्कार-२०२०"

अभिमत-पत्र

वर्ष २०२० के सभी अंकों में प्रकाशित कहानियों के शीर्षक, रचनाकारों के नाम के साथ नीचे दिये गये हैं. वर्ष २०२० के सभी अंक **"कथाबिंब"** की वेबसाइट www.kathabimb.com पर उपलब्ध हैं. पाठक अपनी पसंद का क्रम (१,२,...९, १०) सामने के खाने में लिखकर हमें भेजें. आप चाहें तो इस अभिमत-पत्र का प्रयोग करें अथवा मात्र दस कहानियों का क्रम अलग से एक पोस्टकार्ड पर लिख कर भेज सकते हैं या ई-मेल द्वारा भेजें. प्राप्त अभिमतों के आधार पर इस वर्ष से *सर्वश्रेष्ठ कहानी* (१५०० रु. - एक), *श्रेष्ठ कहानी* (१००० रु. - तीन) तथा *उत्तम कहानी* (७५० रु. के छः) पुरस्कार घोषित किये जायेंगे. कथाबिंब ही देश की एकमात्र पत्रिका है जिसने इस तरह का लोकतांत्रिक आयोजन प्रारंभ किया हुआ है. इसकी सफलता इसी में है कि ज़्यादा से ज़्यादा पाठक अपना निष्पक्ष मत व्यक्त करें. पाठकों का सहयोग ही हमारा मुख्य संबल है.

कहानी शीर्षक / रचनाकार	**आपका क्रम**
१. काठ की हांडी - डॉ. हंसा दीप	
२. टेलीफ़ोन - बद्री सिंह भाटिया	
३. ख़बर की तलाश में - अनिता रश्मि	
४. क्या नाम था उसका? - सुशांत सुप्रिय	
५. हज़ारों पंखों का एक आसमान - संजय कुमार सिंह	
६. अपडेट - कमलेश भारतीय	
७. काल-कोठरी और कंदीलें - शैलेंद्र शर्मा	
८. सांझी छत - छाया सिंह	
९. जॉली बुआ - डॉ. कविता विकास	
१०. रुकी हुई यात्रा - निरुपम	
११. खिलवाड़ - प्रगति गुप्ता	
१२. नैहर छूट गयो - डॉ. प्रभा कुमारी	
१३. सुमन-सुवास - डॉ. निरुपमा राय	
१४. हनी ट्रैप - डॉ. राजेंद्र राजन	
१५. मां की वजह से ज़िंदा हूं - अर्चना पैन्यूली	
१६. सोनकली और अशोकवृक्ष : एक दंतकथा - डॉ. अभिज्ञात	
१७. बोल मेरी मछली कितना पानी? - डॉ. निधि अग्रवाल	
१८. एक नयी ज़िंदगी - रवि शंकर सिंह	
१९. फ़ौजियों की पत्नियां हैं हम - सुधा थपियाल	
२०. निपटारा - मार्टिन जॉन	
२१. जिजीविषा मात्र शब्द नहीं	
२२. और नदी बहती रही - सत्या कीर्ति	
२३. पिंजड़ा - डॉ. पूरन सिंह	
२४. मुझे वापस लौटना है - डॉ. गरिमा संजय दुबे	

'पुष्पगंधा' हिंदी कहानी प्रतियोगिता का परिणाम

'पुष्पगंधा' द्वारा राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कहानी प्रतियोगिता का आयोजन किया गया, जिसमें देश-विदेश के १५० कहानीकारों ने अपनी कहानियां भेज इस प्रतियोगिता में हिस्सा लिया.

प्रथम पुरस्कार : रेणुका अस्थाना - भिवाड़ी, राजस्थान को उनकी कहानी 'कर्ज्ड आइडल' के लिए चुना गया, जिन्हें २१००० रुपये की नकद राशि, स्मृति-चिन्ह व सम्मान-पत्र से नवाजा जाएगा. **द्वितीय पुरस्कार** १५००० रुपये की राशि सुधा जुगरान, देहरादून को उनकी कहानी 'एक मन ऐसा भी' तथा निर्मल जसवाल राणा, टौरंटो-कनेडा को उनकी कहानी 'वैम्पायर' के लिए, क्योंकि दो कहानियों में टाई हो रहा था, इसलिए पुरस्कार को दो में विभाजित किया गया. **तृतीय पुरस्कार** भी ११००० रुपये की राशि मंजुश्री, मुंबई को कहानी 'मुक्ति' तथा पल्लवी पुंडीर 'त्रिपुरा' की कहानी 'केशकर्षिता' में विभाजित हुआ. प्रोत्साहन पुरस्कार के लिए १५००० रुपये की राशि डॉ. अनूप सिंह, दौलतगढ़, पो मिर्जापुर, बुलंद शहर, शिवचरण सरोहा, दिल्ली, नीलम कुलश्रेष्ठ, आगरा, डॉ लोकेंद्र सिंह, बड़नगर जिला उज्जैन तथा वंदना शुक्ल, वाडोदरा ' गुजरात' के लिए घोषित की गयी. इसके अतिरिक्त पांच कहानीकार, विजय कुमार सिंह, आस्ट्रेलिया, को उनकी कहानी 'खजुराहो ही क्यों', राजेश कौल, आस्ट्रेलिया की कहानी 'तीर्थ यात्रा', डॉ. विवेक द्विवेदी, रीवा की कहानी 'दलदल', सरोजिनी नौटियाल देहरादून की कहानी 'एक ठहरा हुआ कर्ज़' तथा अरुण नैथानी चंडीगढ़ को उनकी कहानी 'कायाकल्प' के लिए सम्मान-पत्र व शॉल देकर सम्मानित किया जाएगा. प्रशंसित कहानियों को भी सम्मान पत्र देकर सम्मानित किया जाएगा, जिसकी सूची पत्रिका में प्रकाशित की जा रही है. इस प्रतियोगिता के निर्णायक प्रख्यात कहानीकार तथा बुद्धिजीवी श्रीमती सुमति सक्सेना लाल, दिल्ली, श्रीमती संतोष श्रीवास्तव, भोपाल, श्रीमती सुदर्शन प्रियदर्शिनी, अमेरिका से तथा कुरुक्षेत्र से डॉ लालचन्द गुप्त 'मंगल' जी रहे.

प्रथम पुरस्कार

रेणुका अस्थाना
('कर्ज्ड आइडल')

द्वितीय पुरस्कार

सुधा जुगरान
('एक मन ऐसा भी')

निर्मल जसवाल राणा
('वैम्पायर')

तृतीय पुरस्कार

मंजुश्री
('मुक्ति')

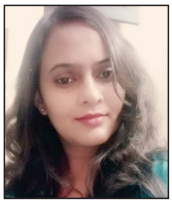

पल्लवी पुंडीर
('केशकर्षिता')

पुष्पगंधा

५५७-बी, सिविल लाइन्स, आई.टी.आई. बस स्टॉप के सामने, अंबाला शहर-१३४००३ (हरियाणा)
मो. : ९९९६८४१५००

पत्रिका का पता : ए-१०, बसेरा, ऑफ घिन-क्वारी रोड, देवनार, मुंबई-४०० ०८८

Investment solutions for all your needs

ICICI Bank

Bright Career

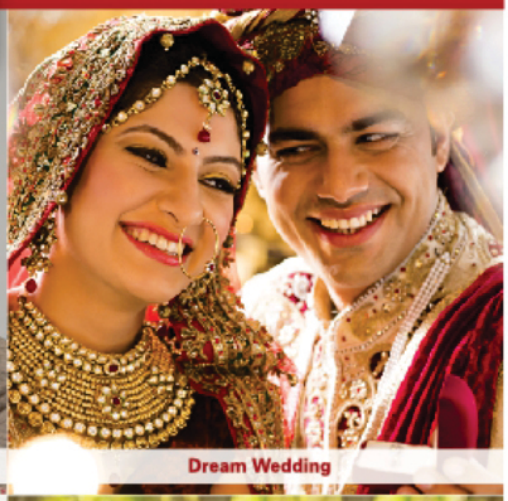

Dream Wedding

Exotic Vacation

Comfortable Retirement

♦ Life Insurance ♦ Mutual Funds

♦ Fixed Deposits ♦ PPF ♦ Recurring Deposits

For more information, please step into our Branch

Terms and Conditions apply.

मंजुश्री द्वारा संपादित व पिकॉक प्रिंट्स, बिल्डिंग नं.-1 के पीछे, अंबेडकर सर्किल, पंतनगर, घाटकोपर, मुंबई-400 075 में मुद्रित.
टाईप सेटर्स : वन अप प्रिंटर्स, 12वां रास्ता, द्वारका कुंज, चेंबूर, मुंबई-400 071.